ऋषि प्रसाद

वर्ष : ५ मई-जून १९९५ अंक : ३०

पाँच रूपये
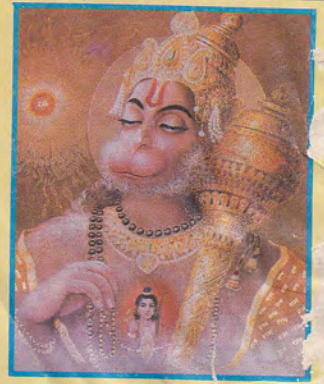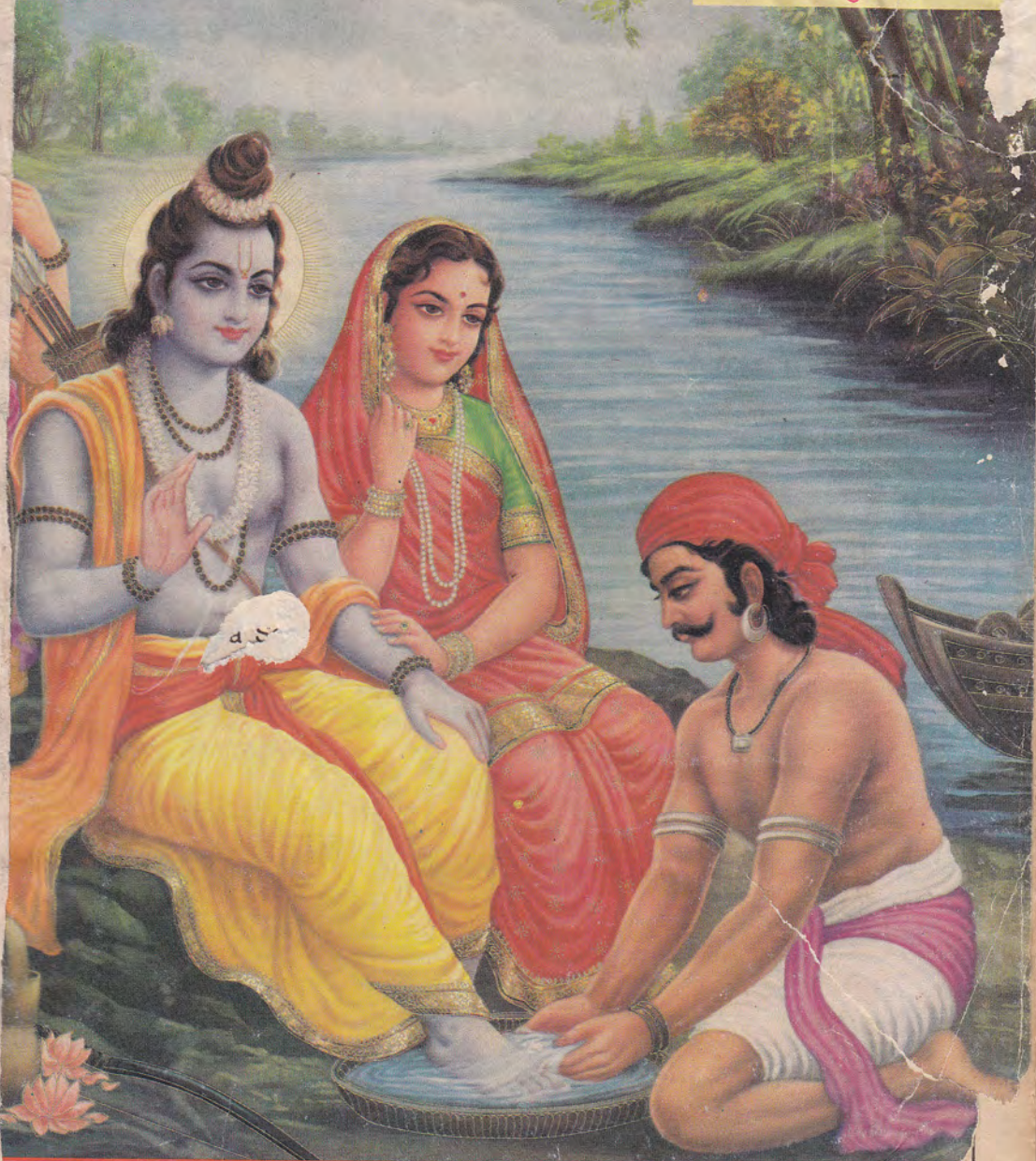
...रामजी बापू

श्री हनुमानजी

...पावा पानि कठवता भरि लेइ आवा । अति आनंद उमगि अनुरागा चरण सरोज पखारन लागा ॥

वर्ष : ५

अंक : ३०

मई-जून १९९५

सम्पादक : के. आर. पटेल

शुल्क वार्षिक : रू. २५

आजीवन : रू. २५०/-

परदेश में वार्षिक : US $ 15 (डॉलर)

आजीवन : US $ 150 (डॉलर)

कार्यालय

'ऋषि प्रसाद'

श्री योग वेदान्त सेवा समिति

संत श्री आसारामजी आश्रम

साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५

फोन : (०७९) ४८६३१०, ४८६७०२.

परदेश में शुल्क भरने का पता :

International Yoga Vedanta Seva Samiti

8 Williams Crest,

Park Ridge, N. J. 07656 U.S.A.

Phone : (201) - 930 - 9195

टाईप सेटींग : विनय प्रिन्टींग प्रेस

प्रकाशक और मुद्रक : के. आर. पटेल

श्री योग वेदान्त सेवा समिति,

संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,

साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने

विनय प्रिन्टिंग प्रेस, मीठाखली एवं भार्गवी प्रिन्टर्स,

राणीप, अहमदाबाद में छपाकर प्रकाशित किया ।

अनुक्रम

❀ 'ऋषि प्रसाद' ❀

हर दूसरे महीने की ९ वीं तारीख को प्रकाशित होता है ।

कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें ।

जीने की कला

मानव जन्म बड़ा कीमती है । समस्त साधनों का धाम एवं मोक्ष का द्वार यह मनुष्य शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है । तुलसीदासजी कहते हैं -

बड़ें भाग मानुष तनु पावा ।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ।।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा ।
पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ।।

इस मनुष्य जीवन को यदि सही ढंग से सद्गुरुओं के मार्गदर्शन के अनुसार जीया जाये, उसीके अनुसार जप, ध्यान, साधनादि किये जायें तो केवल आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं, वरन् भौतिक दृष्टि से भी हम पूर्णतया सफल हो सकते हैं । इतना ही नहीं, हम अपने ही भीतर परब्रह्म परमात्मा का दीदार भी कर सकते हैं ।

जो बाह्य वस्तुएँ पाकर सुखी होना चाहता है, जो अपने जीवन में बीड़ी, सिगरेट, शराब आदि का आदर करता है, उसके जीवन में खिन्नता, अशांति और बेचैनी व्याप्त हो जाती है । किन्तु जो व्यक्ति सत्संग का, ऋषियों का, उनके अनुसार बताये गये जीवन जीने का आदर करता है उसका जीवन प्रेम, आनंद, शांति और प्रसन्नता से परिपूर्ण हो जाता है । आप हजारों रूपये लेकर बाज़ार में घूमो और प्रसन्नता देनेवाले साधन-वस्तुएँ खरीदो । उससे आपको इतना आनंद नहीं आयेगा जितना कि सत्शिष्यों को सद्गुरुओं के दर्शन व सत्संग से आनंद आता है ।

सुकरात के प्रति सहानुभूति रखनेवाले कई सेठ एक दिन सुकरात को लेकर बड़े-बड़े स्टोरों में दिनभर घूमे । एक से एक बड़े-बड़े बाज़ारों-स्टोरों में मिलियन डॉलर तक का सामान भी यदि सुकरात खरीदेंगे तो हम अभी ही इसका भुगतान कर देंगे यह सोचकर उन्होंने, जवाहरात, फर्नीचर, खाद्यवस्तुओं के स्टोर-एक से एक मनलुभावनी चीजोंवाले स्टोर दिखाए । संध्या हो गई । अभावग्रस्त जीनेवाले सुकरात ने दिन भर घूमने के बाद भी कुछ नहीं खरीदा । सेठों को अत्यंत आश्चर्य हुआ । सुकरात ने सब स्टोर में घूमने के बाद आश्चर्य को भी आश्चर्य में डाले ऐसा नृत्य किया । सेठों ने साश्चर्य पूछा :

"आपके पास न फर्नीचर है, न सुखी जीवन की कुछ सामग्री है । हमें कई दिनों से तरस आ रहा था इसलिए स्टोरों में घुमाया और बार-बार हम कहते थे कि कुछ भी खरीद लो ताकि हमें सेवा का कुछ मौका मिले । अब आप और हम घूम करके थक गये । आपने खरीदा तो कुछ नहीं और अब मजे से नृत्य कर रहे हो !"

भारतीय तत्त्वज्ञान के प्रसाद से प्रसन्न हुए उस तृप्तात्मा सुकरात ने कहा -

"तुम्हारे पास ऐहिक सुख-साम्राज्य होने पर भी तुम उतने सुखी नहीं जितना बिना वस्तु, बिना व्यक्ति और बिना सुविधा के मैं इतना सारा सुखी हूँ, इस खुशी में मैं नाच रहा था ।"

"तुम्हारे पास ऐहिक सुख-साम्राज्य होने पर भी तुम उतने सुखी नहीं जितना बिना वस्तु, बिना व्यक्ति और बिना सुविधा के मैं इतना सारा सुखी हूँ, इस खुशी में मैं नाच रहा था ।"

अभावग्रस्त परिस्थिति और कुरूप शरीर में सुकरात इतने सुखी और सुरूप तत्त्व में पहुँचे थे

कि कई सुखी व सुरूप उनके चरणों के चाकर होने से अपने को भाग्यशाली मानते थे ।

अद्‌भुत है आत्मविद्या । काली काया, ठिंगना कद, आठ-आठ खामियाँ... ऐसे कुरूप शरीर में भी अष्टावक्र परमात्मस्वरूप की मस्ती से अंदर से इतने सुरूप हुए कि विशाल काया व विशाल राज्य के धनी जनक उनके शिष्य कहलाने में गौरव का अनुभव करते थे । सुकरात का शिष्य होने में प्लेटो भी गौरव का अनुभव करता था ।

गुरुजन, संतजन तो किसी एक-दो के नहीं वरन् मानवमात्र के हितैषी होते हैं । अतः वे सदैव आपके कल्याण में ही रत रहते हैं ।

क्या तुम अपने उस आत्मा के सौन्दर्य को पाना चाहते हो ? प्रेमरस-प्यालियाँ पीना चाहते हो ? जन्म-जन्म की कंगालियत मिटाना चाहते हो ? ...तो उस आत्मधन परमेश्वर-प्रसाद को पाये हुए महापुरुषों को खोजो ।

प्लेटो की नाईं सुकरात, जनक की नाईं अष्टावक्र, नरेन्द्र की नाईं रामकृष्ण, सलूका-मलूका की नाईं कबीर, बाला-मरदाना की नाईं नानक को खोजो । अटूट श्रद्धा, दृढ़ पुरुषार्थ, पवित्र और निःस्वार्थ प्रेम से उन महापुरुषों के साथ जुड़ जाओ । फिर देखो मजा ! कोहिनूर देनेवालों से कंकर-पत्थर माँगकर अपने अहं का पोषण नहीं, राग-द्वेष के शिकार नहीं, सच्चे तलबदार बनना...

वे करुणा-कृपावश अपनी समाधि का आनंद छोड़कर भी हमारे बीच आते हैं हमें उन्नति की राह बताने के लिए, परमात्म-प्रसाद बाँटने के लिए ।

आप जिसके हितैषी हैं उसकी उन्नति देखकर आपके हृदय में प्रसन्नता होती है और उसका पतन देखकर आपके हृदय को ठेस पहुँचती है । किन्तु गुरुजन, संतजन तो किसी एक-दो के नहीं वरन् मानवमात्र के हितैषी होते हैं । अतः वे सदैव आपके कल्याण में ही रत रहते हैं ।

माता-पिता अपने पुत्र का सदैव कल्याण ही चाहते हैं अतः उसका अमंगल देखकर उन्हें दुःख तो होगा ही । कोई जवान लड़का दारू पीता हो, जुआ खेलता हो, तो देखो उसके माता-पिता के क्या हाल होते हैं ? बेटे को जरा-सी चोट लग जाये तो देखो माँ का हृदय कैसा होता है ? माँ भोजन का एक ग्रास भी नहीं खा सकती । इस स्थूल शरीर को चोट लगती है तब माँ का कलेजा इतना फटता है तो आपके अंतःकरण को जब काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, राग-द्वेष की चोटें लगती हैं तो गुरुरूपी माता के हृदय को कितना दुःख होता होगा ? इसका तो आप अनुमान भी नहीं लगा सकते । इसीलिए वे करुणा-कृपावश अपनी समाधि का आनंद छोड़कर भी हमारे बीच आते हैं हमें उन्नति की राह बताने के लिए, परमात्म-प्रसाद बाँटने के लिए ।

सद्‌गुरुओं के मार्गदर्शन में जीवन जीने से मनुष्य समस्त आपदाओं से पार हो जाता है । तब काल भी अपना सिर कूटता है गुरुओं के प्रसाद को देखकर । वह सोचता है 'कि मैंने कई बार इस जीव को मारा था किन्तु अब गुरुओं के, संतों के प्रसाद को ग्रहण करके यह जीव जीवन-मरण के पाश से मुक्त हो जायेगा । मेरा शिकार चला गया...' यह सोचकर वह सिर कूटता है । कबीरजी कहते हैं -

मन की मनसा मिट गई,
अहं गया सब छूट ।
गगन मण्डल में घर किया,
काल रहा सिर कूट ।।

सद्‌गुरुओं के सान्निध्य से जीव की जन्म-जन्मांतरों की जो भ्रमणा थी कि 'मैं देह हूँ...

जगत् सच्चा है' वह दूर हो जाती है । अपने शरीर को सदा टिकाये रखने की वासना निवृत्त हो जाती है क्योंकि जीव को पता चल जाता है कि 'मैं सदा हूँ, अमर हूँ, मेरे वास्तविक स्वरूप का कभी नाश नहीं होता और शरीर किसीका भी होकर सदा नहीं टिकता ।'

'मैं आनंदस्वरूप हूँ । आनंद किसी बाह्य वस्तु में नहीं है वरन् मेरा अपना-आपा ही आनंदस्वरूप है । आज तक मैं जो सोच रहा था कि वस्तुओं में सुख है पद-प्रतिष्ठा में सुख है, विदेशों के, विलासी देशों के वातावरण में सुख है, वह सुख न था, मेरी ही भ्रांति थी । ऋषिकृपा से, गुरुकृपा से मेरी वह भ्रांति दूर हो गयी और अब पता चला कि सब पदों का जो बाप है वह आत्मपद मैं ही हूँ । सब सुख जहाँ से प्रगट होते हैं वह सुखस्वरूप, वह आनंदस्वरूप, आत्मा मैं ही हूँ ।'

> गुरुकृपा से मेरी वह भ्रांति दूर हो गयी और अब पता चला कि सब पदों का जो बाप है वह आत्मपद मैं ही हूँ ।

जब गुरुओं का प्रसाद मिलता है, भीतरी रस जब मिलने लगता है, अंतर्यामी परमात्मा का स्वभाव जब प्रगट होने लगता है तब इस जीव की 'मैं' पने की समस्त भ्रांतियाँ, वासनाएँ मिट जाती हैं और वह चिदाकाशरूपी गगन मण्डल में अपना घर कर लेता है अर्थात् अपने आपको अपने घर में ही पा लेता है ।

अभी तक तो वह अपने को हाड़-मांस के घर में मान रहा था । जबकि हाड़-माँस का घर ईंट-चूने के घर के सहारे, ईंट-चूने का घर पृथ्वी के सहारे था । पृथ्वी जल पर, जल तेज पर, तेज वायु पर और वायु आकाश के सहारे थी । आकाश भी महत्तत्त्व के सहारे, महत्तत्त्व प्रकृति के सहारे था और हम प्रकृति से प्रेरित होकर जन्म-मरण के चक्र में जी रहे थे । किन्तु गुरुओं की कृपा से अब हमें पता चला है कि प्रकृति हमारे सहारे है । हमारी आत्मा के सहारे ही पूरी प्रकृति चल रही है ।

ऐसे निजस्वरूप में जगानेवाले सद्गुरुओं के चरणों में हमारे कोटि-कोटि प्रणाम हैं...

❀

ज्ञानेश्वरी गीता में गुरुभक्ति

ज्ञानेश्वरी गीता के तेरहवें अध्याय के सातवें श्लोक की व्याख्या के संदर्भ में ज्ञानेश्वरजी महाराज गुरुभक्ति पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं :

गुरुसेवा सम्पूर्ण भाग्य की जन्मदात्री है, क्योंकि यह शोकग्रस्त को ब्रह्मस्वरूप बनाती है । जिस प्रकार गंगा समस्त जल लेकर समुद्र से मिलती है, अथवा पतिव्रता स्त्री अपना समस्त जीवन पति को अर्पण कर देती है उसी प्रकार जो व्यक्ति अपना सर्वस्व गुरु को अर्पण कर देता है और जिसने अपने शरीर को गुरुभक्ति का निवास बना लिया है, जिस देश में गुरु रहते हैं उसी देश में जिसका मन बसा रहता है, उस तरफ से जो पवन आता है उसे भी जो नमस्कार करता है, जिसका केवल देहमात्र ही गुरु का आदेश पालन करने के लिये अपने ग्राम में रहता है, पर स्वयं तो हमेशा गुरु से मिलने की बात सोचा करता है, जो गुरु के कुल का नाम सुनते ही महासुख का अनुभव करने लगता है, जो अपने शुद्ध हृदयमंदिर में अपने गुरुरूपी भगवान की स्थापना करके सदैव पूजा किया करता है, जो अपने गुरुरूपी विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्मा बनकर उनका ध्यान करता रहता है, जो ज्ञानरूपी वृक्ष के नीचे गुरु को गाय मानकर स्वयं उसके बछड़े की तरह बन जाता है, अथवा गुरुकृपा के स्नेहरूपी जल में स्वयं मछली ही बन गया हो- ऐसी भावना किया करता है, जो गुरुकृपा को अमृतरूपी वर्षा समझकर अपने को गुरु-सेवकरूपी पौधा मानता है, अथवा अपने को बिना आँख और पँखों का पक्षी-शावक

समझकर गुरुरूपी पक्षिणी माता के मुँह से चारा लेता है, अथवा गुरु को नौका समझ उनका सहारा लेता है... इस प्रकार गुरु की मूर्ति को हृदय में धारण करके ध्यान करता है, वही गुरुभक्त ध्यानसुख का यथार्थ अनुभव प्राप्त करता है ।

गुरुभक्त गुरु की सेवा करने में न तो रात या दिन का ख्याल करता है और न कभी यह कहता है कि 'अब तो बहुत सेवा हो गई ।' अगर गुरु काम करने की आज्ञा देते हैं तो गुरुभक्त को ऐसी अभिलाषा होती है कि वह गगन के समान विशाल बन जाय और समस्त कामों को अकेला ही पूरा कर ले। किसी अवसर पर वह गुरु के लिये अपना जीवन ही न्यौछावर कर देता है । गुरु की परम्परा से चला आनेवाला धर्म ही उसके लिये वर्णाश्रम धर्म बन जाता है । गुरु ही उसका तीर्थ है, गुरु ही उसका देव है, गुरु ही माता-पिता हैं और वह गुरुसेवा के अतिरिक्त अन्य किसी बात को जानता ही नहीं ।

गुरु का द्वार ही उसके लिये सब धर्मों का सार है और गुरु के सेवक से वह अपने सगे भाई की तरह प्रेम रखता है । उसकी वाणी दिन-रात गुरुनाम का ही जाप करती रहती है और वह गुरुवाक्य के अतिरिक्त किसी अन्य शास्त्र को हाथ नहीं लगाता । गुरु के चरणों से स्पर्श किया जल चाहे जैसा भी हो, वह उसे तीनों लोकों के तीर्थजल से अधिक पवित्र मानता है । गुरु के उच्छिष्ट प्रसाद के सम्मुख उसे समाधिसुख तुच्छ जान पड़ता है । गुरु के चलने से जो रजकण उड़ते हैं, उन्हें वह मस्तक पर धारण कर इसे मोक्ष से भी बड़ा लाभ मानता है ।

उसकी गुरुभक्ति की महिमा का कहाँ तक वर्णन करूँ ! क्योंकि उसका पार नहीं है । जिसको गुरुभक्ति की इच्छा होती है, उस पर प्रेम होता है, जिसे गुरुसेवा से बढ़कर मधुर और कोई वस्तु नहीं लगती, उसी को ब्रह्मज्ञान की वास्तविक प्राप्ति होती है ।

❀

फकीरों की रहमत

हम फकीरों से जो चाहे दुआ ले जाए।
फिर खुदा जाने किधर हमको हवा ले जाए।।
रात दिन दिल के किवाड़ खुला रखते हैं।
जाने कब हमको कौन आ के बुला ले जाए।।
हम सर-ए-राह लिए बैठे हैं इक चिंगारी ।
जिसका जी चाहे चिरागों में जला ले जाए ।।
हम तो देने के काबिल ही कहाँ हैं लेकिन ।
हाँ, कोई चाहे तो जीने की अदा ले जाए।।
शिकवे की बात है न शिकायत की बात है ।
अपनी तो सद्गुरुदेव से मुहब्बत की बात है।।
मुझ जैसे गुनाहगार को दर पर बुला लिया।
काबिल कहाँ हूँ मैं उसकी रहमत की बात है।।

- महावीरप्रसाद शर्मा, बम्बई ।

पाठकों व ग्राहक सदस्यों से निवेदन

❀ कृपया ध्यान दें ❀

१. 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका से सम्बन्धित कोई भी पत्रव्यवहार, ड्राफ्ट, मनीऑर्डर आदि कृपया 'ऋषि प्रसाद' के नाम से ही भेजें, श्री योग वेदान्त सेवा समिति के नाम से न भेजें । पूरा पता इस प्रकार करें : 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय, श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५.

२. 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सेवाधारी एजेन्ट बनने के लिए निकट की श्री योग वेदान्त सेवा समिति के सदस्यों द्वारा पहचान-पत्र प्राप्त करना आवश्यक है ।

३. सदस्यों को अपने पते में किसी भी प्रकार का परिवर्तन करवाना हो तो पत्रिका प्रकाशित होने के पूर्व, एक मास पहले पत्र द्वारा 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय में सूचित करना अनिवार्य है.

अहं का सर्जन नहीं, विसर्जन करें

जीवमात्र का परम कर्त्तव्य यह है कि वह अपने अंदर छुपी हुई सहजता, सरलता व निरहंकार सत्ता को प्राप्त कर ले । निरहंकार सत्ता ही आत्मसत्ता है, परमात्मसत्ता है । उस सत्ता में चित्त यदि घड़ी भर के लिए भी शान्त हो जाये तो उनके जन्मों के कर्म मिट जाते हैं, जन्मों-जन्मों की थकान मिट जाती है ।

यद्यपि वह आत्मसत्ता, परमात्मसत्ता है तो सबके पास फिर भी उसका अहसास नहीं होता, उस परमात्मसत्ता का आनंद हम लोग नहीं ले पाते । क्यों ? क्योंकि अहंकाररूपी पिशाच ने हमारी देह में मैं और संसार की वस्तुओं में 'मेरे'पने की भ्रान्ति भर दी । तुलसीदासजी ने ठीक ही कहा है कि -

मैं अरु मोर तोर तैं माया ।
जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया ॥

'मैं और मेरा... तू और तेरा...' यही माया है, जिसने समस्त जीवों को वश में कर रखा है ।'

देह तो पाँच भूतों से निर्मित है, मन संकल्प-विकल्प करके जगत को देख रहा है, निर्णय बुद्धि कर रही है लेकिन इन सबका आरोप अहंकार अपने में कर लेता है । जीव का 'मैं' और 'मेरा'पना जितना गहरा हो जाता है उतना ही वह स्वाभाविक, आनंदित, ईश्वरीय व परम शांति के जीवन से दूर हो जता है । अहंकाररूपी पिशाच इस जीव को बार-बार जन्म-मरण के चक्कर में भटकाता रहता है ।

संसार को मेरा-मेरा कह कर कई लोग मर गये लेकिन संसार किसीका था नहीं, है नहीं और होगा भी नहीं । अरे ! संसार तो भगवान श्रीराम का भी नहीं हुआ, श्रीकृष्ण का भी नहीं हुआ, कबीरजी व नानकजी जैसे संतों का भी नहीं हुआ, तो फिर हमारा-तुम्हारा कैसे हो सकता है ? फिर भी अहंकाररूपी पिशाच 'यह मेरा... वह मेरा...' कर-करके, देह को 'मैं' और देह के संबंधियों को 'मेरा' मानकर उस आत्मसत्ता की, आत्मदेव की अवहेलना कर देता है । हममें एवं हमारे भीतर छुपी हुई परमात्म-सत्ता में यह अहंकार एक बड़ी दीवार खड़ी कर देता है ।

> अहंकाररूपी पिशाच इस जीव को बार-बार जन्म-मरण के चक्कर में भटकाता रहता है ।

आग लगे तुम्हारे उस पद और प्रतिष्ठा को जो तुम्हें परमात्मा से अलग अपना व्यक्तित्व स्थापित करने को प्रेरित करते हैं । बालक जब छोटा होता है - महीने-दो महीने का, पाँच महीने का, तब बड़ा आनंदित और प्रसन्न होता है । खुद तो आनंद में रहता ही है, किसीको थोड़ा भी निहारता है तो वह व्यक्ति भी आनंदित हो जाता है । कभी वे भी दिन थे जब तुम छोटे रहे होगे और अपने माता-पिता की थकान मिटाते होगे जरा-सी आँख उठाकर । ...और आज देखो तो चेहरे पर साढ़े-बारह भी बज जाते हैं । ऐसा क्यों होता है ? क्योंकि बच्चा जब बड़ा होता है, 'मैं' और 'मेरे' पने के भाव में आ जाता है इस कारण वह निर्दोषता के स्वर्गीय खजाने से, स्वर्गीय

> संसार को 'मेरा-मेरा' कह कर कई लोग मर गये लेकिन संसार किसीका था नहीं, है नहीं और होगा भी नहीं ।

राज्य से नीचे आ जाता है ।

बालक जब तक निर्दोष होता है, जब तक उसे 'मैं' और 'मेरे'पने का भान नहीं होता तब तक उसकी हर अदाएँ, हर चेष्टाएँ मधुर लगती हैं । बच्चा पिता की गोद में बैठा है और पिता से कुछ माँगता है । पिता ने नहीं दिया तो बच्चा रूठ जाता है, गोद से उठकर चल पड़ता है । पिता बोलते हैं कि 'इधर आओ, इधर आओ ।' वह जवाब दे देता है कि, 'मैं आपके साथ कभी नहीं बोलूँगा, आपके पास कभी नहीं आऊँगा ।' ऐसा कह कर दौड़ जाता है किन्तु थोड़ी ही देर बाद पिता की गोद में आकर बैठ भी जाता है । उसका रूठना भी आपको मधुर लगता है क्योंकि उसके लिए अभी राग, राग नहीं है और द्वेष, द्वेष नहीं है । आयी कोई तरंग, तो जरा नाराज हो गया फिर वैसे का वैसा ।

> आग लगे तुम्हारे उस पद और प्रतिष्ठा को जो तुम्हें परमात्मा से अलग अपना व्यक्तित्व स्थापित करने को प्रेरित करते हैं ।

हमारा बचपन कब नष्ट हुआ ? जबसे अपमानित वचनों ने हमको पकड़ दे दी । जबसे हमने ग्रंथियाँ बाँधना शुरू कर दिया, तबसे हमारा बचपन खो गया । जब अहंकार विकसित होता है तब गाँठ बाँधना शुरू कर देता है और जैसे ही गाँठें बँधने लगती हैं तो बचपन का स्वर्ग चला जाता है । बचपन के बाद जवानी, जवानी के बाद बुढ़ापा आता है लेकिन गाँठें बँधती ही जाती हैं ।

उन गाँठों को खोलने की युक्ति को ही साधना कहा जाता है । कीर्तन करते-करते, जप या ध्यान करते-करते थोड़ी-थोड़ी गाँठें खुलती जाती हैं । हमारे अहं की गाँठें जितने अंश में खुली होती हैं उतने ही हम आत्मानंद में मस्त होते हैं । रात्रि में निद्राधीन होने के कारण ये गाँठें दबी हुई होती हैं इसीलिए शांति मिलती है ।

> हमारा बचपन कब नष्ट हुआ ? जबसे अपमानित वचनों ने हमको पकड़ दे दी, जबसे हमने ग्रंथियाँ बाँधना शुरू कर दिया ।

कई लोग शांति पाने के लिए शराब, ड्रग्स एवं अन्य नशीले पदार्थों का उपयोग करते हैं । हालांकि शराब पीने से न तो घाटा पूरा होता है, न मृत व्यक्ति जीवित हो जाता है और न ही दुकान का कोई 'पज़ेशन' मिल जाता है । 'लेकिन क्या करें ? 'पज़ेशन' नहीं मिलता इसलिए उसी चिंता-चिंता में मैं दारू पीता हूँ ।' पीता तो क्या है ? अहंकार जो चिंतन कर रहा था कि 'मेरी दुकान... मेरी दुकान...' तो कुछ देर के लिए शराब पीकर, अल्कोहल के द्वारा उसे मूर्च्छित कर दिया । नशा उतर गया तो फिर वही चिंता दिन-दुगनी, रात-चौगुनी होकर परेशान करती रहती है ।

कुछ लोग समझते हैं कि हमारे दुःखों को मिटाने के लिए यह एक रास्ता है कि अहंकारूपी पिशाच को अल्कोहल पिलाया जाये, दारू पिलायी जाये । इससे थोड़ी देर के लिए उसके दुःख का चिन्तन दब जाता है । लेकिन जब अल्कोहल का नशा खत्म हो जाता है तो इंसान फिर से दुःखी हो जाता है । शराब अथवा अन्य नशीली वस्तुएँ शरीर का सत्यानाश कर उसे खोखला कर देती हैं । इसकी अपेक्षा अत्यधिक सुन्दर रास्ता तो यह है कि भगवान के नाम का जप, ध्यान, कीर्तन इत्यादि करके अपने तन एवं मन को स्वस्थ एवं प्रफुल्लित कर दिया जाय ।

अपने घर में एशो-आराम के साधन, साज-सामान एवं बढ़िया फर्नीचर इत्यादि लाकर मनुष्य अपने अहंकार का ही पोषण करना चाहता है फिर भी उसे तृप्ति नहीं होती । दूसरे के घर का फर्नीचर अपने घर से जरा बढ़िया दिखेगा तो अहंकार सिकुड़ेगा

और दूसरे के घर का फर्नीचर अपने घर से जरा हल्का होगा तो अहंकार बढ़ेगा। ये सब खेल अहंकार ही तो करवाता है जिसकी वजह से हम अपने शुद्ध स्वरूप आत्मदेव से दूर हो जाते हैं।

इसलिए जो काम, जो प्रवृत्ति, जो भजन, स्मरण, सेवा आदि क्रियाकलाप हम सुबह से करते हैं उसमें हमारी सजगता होनी चाहिए। जो कोई व्यवहार हम करते हैं उस व्यवहार में हमारा अहंकार सुसज्जित हो रहा है कि विसर्जित हो रहा है ? हम अहंकार को बढ़ाने के लिए काम कर रहे हैं कि अहंकार को परमात्मा में मिटाने के लिए कर रहे हैं ? इस बात का भी तनिक ख्याल करना चाहिए। बेटे की शादी में बैण्ड-बाजे बजाने की कोई मनाई नहीं है लेकिन उन बैण्ड-बाजों के साथ-साथ नादानुसंधान करते-करते सुषुप्त आनंद को विकसित करते हो कि सुषुप्त अहंकार को विकसित करते हो, इसका जरा ध्यान रखना। उत्सव इत्यादि के समय जो लेन-देन करते हो, उसमें सामनेवाले के हृदय में परमात्मा छुपा हुआ है ऐसे भाव से देते हो कि 'मैं कुछ देनेवाला हूँ... I am something...' इस अहं को पुष्ट करने के लिए देते हो ? इसके लिए जरा सावधान रहना। जो कुछ भी तुम्हारी प्रवृत्ति होती है सुबह से शाम तक, उस प्रवृत्ति में तुम्हारा अहंकार विसर्जित होता है कि सर्जित होता है ? आत्मप्रेम बढ़ता है कि अहंप्रेम बढ़ता है ? देह की प्रतिष्ठा बढ़ाने में तुम्हारी बुद्धि लगती है कि देह के अहंकार को मिटाने में लगती है ? जो ऐसी सावधानी रखता है वह परमात्म-प्रेम के निकट पहुँच जाता है। ऐसे व्यक्ति का बाहर के साधन एकत्रित करके सुखी होने का भरम टूट जाता है और वह स्वयं सुखस्वरूप हो जाता है।

शराब अथवा अन्य नशीली वस्तुएँ शरीर का सत्यानाश कर उसे खोखला कर देती हैं। इसकी अपेक्षा अत्यधिक सुन्दर रास्ता तो यह है कि भगवान के नाम का जप, ध्यान, कीर्तन इत्यादि करके अपने तन एवं मन को स्वस्थ एवं प्रफुल्लित कर दिया जाय।

बच्चों को आप गहने-कपड़े पहनायेंगे तब बच्चे शोभा देंगे, लेकिन श्रीकृष्ण जिस वस्तु को हाथ में ले लेते हैं वही शोभनीय हो जाती है। बँसी को हाथ में पकड़ लेते हैं तो बँसी शोभनीय हो जाती है, मोरपंख को सिर पर धारण कर लेते हैं तो उसकी कीमत बढ़ जाती है, आभूषण धारण करते हैं तो आभूषणों का मूल्य बढ़ जाता है और जिस गाय पर जरा-सा हाथ घुमा देते हैं उस गाय की कीमत बढ़ जाती है। श्रीकृष्ण जैसे, श्रीराम जैसे, देह का अहंकार जिनमें स्फूरा ही नहीं, ऐसे 'अहं ब्रह्मास्मि' के आनंद में रहनेवाले व्यक्ति जिस वस्तु को देखते हैं, स्पर्श करते हैं या स्वीकार कर लेते हैं, वे वस्तुएँ भी आदरणीय हो जाती हैं फिर स्वयं उनकी तो बात ही क्या है ? और, जो उनके सान्निध्य में रहते हैं, उनका संग करते हैं एवं उनके श्रीचरणों में स्वयं भी अपने अहं को विसर्जित करने के मार्ग पर चल पड़ते हैं उनका भी बेड़ा पार हो जाये, इसमें क्या आश्चर्य है ?

हम अहंकार को बढ़ाने के लिए काम कर रहे हैं कि अहंकार को परमात्मा में मिटाने के लिए कर रहे हैं ? इस बात का भी तनिक ख्याल करना चाहिए।

❀

संसार या सांसारिक प्रक्रिया के मूल में मन है। बन्धन और मुक्ति, सुख और दुःख का कारण मन है। इस मन को गुरुभक्तियोग के अभ्यास से ही नियंत्रित किया जा सकता है।

आत्मतत्त्व में स्थिति

अणोरणीयान् महतो महीयान् ।
आत्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम् ॥

'अणु से भी छोटा और महान् से भी महान् ऐसा यह आत्मा जीवों की हृदयगुहा में स्थित है ।'

(कठोपनिषद् : द्वितीय वल्ली, श्लोक-२०)

उसके विषय में भगवद्‌गीता में कहा गया है :

न जायते म्रियते वा कदाचिन् -
नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

'यह आत्मा किसी काल में भी न जन्मता है और न मरता है अथवा न यह आत्मा हो करके फिर होनेवाला है क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है । शरीर के नाश होने पर भी इसका नाश नहीं होता है ।' (भगवद्‌गीता : २.२०)

शरीर के मरने पर भी जो शुद्ध 'मैं' है वह मरता नहीं है । देखा जाए तो शरीर भी वास्तव में नहीं मरता है । मृत्यु के बाद शरीर को जला दो तो उसका जो जल भाग है, वह बाष्प हो जाएगा और बादल बनकर कहीं बरसेगा । जो पृथ्वी का भाग है वह राख होकर मिट्टी में मिल जाएगा । उसमें कोई पौधा उगेगा । जो तेज का अंश है, अग्नि का भाग है, वह महाअग्नि में मिल जाएगा । उसमें जो आकाश तत्त्व है वह महाकाश से मिल जाएगा । नाश तो कुछ होता नहीं है, रूपांतरित होता है । हमारी आंखों से कोई ओझल होता है तो हम समझते हैं वह मर गया । वास्तव में कोई मरता नहीं है । जब कोई मरेगा नहीं तो जन्मेगा कैसे ? उस पंचमहाभूत का थोड़ा-थोड़ा हिस्सा इ ट्ठा होकर शरीर दिखता है, तब कहते हैं 'जन्म हुआ' । वह जियेगा २५-५० या ६०-७० साल, फिर वे पाँचभूत अलग-अलग व्यापक पाँच महाभूतों में मिल जाते हैं उसे कहते हैं 'मर गया' । वास्तव में तो,

न कोई जन्मे, न कोई मरे,
न कोई भाई, न कोई बाप ।
आप ही लाडी, आप ही लाडा,
जहाँ देखो वहाँ आप ही आप ॥

कहीं तो वह लाडी के रूप में दिख रहा है, कहीं लाडा दिख रहा है किन्तु है तो वही चैतन्य आत्मा । अनेक रूपों में वही एक है । संसार के सारे क्रिया-कलापों का आधार भी वही है ।

जैसे सिनेमा में आप देखते हैं कि एक ही लाईट है पर प्लास्टीक की पट्टियों पर पड़ती है तो अनेक रूप-रँग और क्रियाएँ देखने को मिलती हैं । कहीं मोटरगाड़ी भागी जा रही है, तो कहीं ट्रेन दौड़ रही है । कहीं 'हीरोईन' को गुंडों ने पकड़ा है, कहीं बस्ती में आग लगाई जा रही है तो कहीं उत्सव मनाया जा रहा है । इस प्रकार देखोगे कि आग भी उसीमें, बस्ती भी उसीमें, 'हीरोईन' भी वही और गुंडे भी वही, उसी परदे पर । सब लाईट का ही चमत्कार है । एक ही लाईट अनेक रूपों में दिखती है ।

> हमारी आँखों से कोई ओझल होता है तो हम समझते हैं वह मर गया । वास्तव में कोई मरता नहीं है । जब कोई मरेगा नहीं तो जन्मेगा कैसे ?

ऐसे ही अनेक रूपों में छिपा हुआ एक का एक

जो तत्त्व है वही सबका आधार है। वह एक ही तत्त्व अनेक रूपों में भासता है।

यह ज्ञान समझ में आ जाय तो फिर काम, क्रोध, लोभ, मोह, मेरा-तेरा सब छूट जाएगा। तुम कितने भी भयानक हो, कितने भी डरावने हो, तुम्हें देखकर छोटे-बड़े डर जाएँ लेकिन तुम अपने आपको देखकर कभी नहीं डरोगे। तुम्हारा रूप इतना सुहावना है कि तुम्हें देखकर कई लोग तुम्हारे पीछे दीवाने हो जाएँ, पर तुम अपने को देखकर दीवाने होगे क्या ? नहीं। दूसरे को देखकर काम होगा, दूसरे को देखकर क्रोध होगा, दूसरे को देखकर मोह होगा। अपने को देखकर काम, क्रोध, मोह थोड़े ही होगा ! अगर आप ही सबमें अपना-आपा देख लोगे तो फिर आप ही आप बचोगे, तब काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईर्ष्या, चिंता सब शांत हो जाएगा।

अनेक रूपों में छिपा हुआ एक का एक जो तत्त्व है वही सबका आधार है। वह एक ही तत्त्व अनेक रूपों में भासता है।

यह ज्ञान समझ में आ जाय तो जपी का जप सफल हो जाय, तपी का तप सफल हो जाय। ऐसा अद्भुत ज्ञान है यह आत्मज्ञान !

यह गुलाब, गेंदा, चमेली, सेव-संतरे, सब अलग-अलग दिखते हैं लेकिन तत्त्वदृष्टि से देखो तो सब एक हैं। ऐसे ही जिनको तत्त्व की बात समझ में आ जाये वह चांडाल, कुत्ता, गाय, ब्राह्मण और हाथी में छुपे हुए एक तत्त्व को जानकर सबको समभाव से देखता है। ऐसा भगवद्गीता में कहा गया है :

अगर आप सबमें अपना आपा देख लोगे तो फिर आप ही आप बचोगे, तब काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईर्ष्या, चिंता सब शांत हो जाएगा।

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पंडिताः समदर्शिनः ।।

(श्रीमद्भगवद्गीता : ५.१८)

एक बार किसीके घर कोई ब्रह्मवेत्ता महापुरुष पधारे थे। वे दिन में अपना ध्यान-भजन, नित्य-नियम करते। किसी जिज्ञासु, साधकों-भक्तों को साधना के विषय में मार्गदर्शन देते और शाम को गाँव के चौक में सत्संग करते थे।

जिसके यहाँ बाबाजी ठहरे थे वह बाबाजी का बड़ा भगत था लेकिन बुद्धू था। वह भी बाबाजी का सत्संग सुनने जाता था।

एक दिन बाबाजी ने सत्संग में कहा : "जो बुद्ध पुरुष हैं, ज्ञानीजन हैं वे समदर्शी होते हैं। वे विद्या और विनयसंपन्न ब्राह्मण, गाय, कुत्ता, हाथी और चांडाल में समभाव से देखनेवाले, समदर्शी होते हैं।"

सत्संग सुनकर वह भगतजी घर आये। देखा तो पत्नी का हाथ साफ नहीं होने से (मासिक धर्म में होने से) भोजन नहीं बनाया था। खुद तो भोजन बनाना जानता नहीं था। भगतजी ने सोचा कि 'आज सत्संग में सुना है, सब में एक ही आत्मा है। ज्ञानी महापुरुष समदर्शी होते हैं। वे सब में एक को ही देखते हैं...' तो उसने गाय के लिये बनाया हुआ खुराक गुरुजी के सामने रख दिया और कहने लगा :

"पत्नी भोजन नहीं बना पाएगी, मुझे भोजन बनाना आता नहीं है और गुरुजी ! आपने कहा कि गाय, कुत्ता, ब्राह्मण आदि में एक बसा है तो आज गाय का खुराक आपको अर्पण करता हूँ।"

गुरुजी ने कहा : "बुद्धूजी ! मैंने कहा था, 'पंडिताः समदर्शिनः।' 'समवर्तिनः' नहीं। समदर्शन होता है, समवर्तन नहीं होता है। कुत्ते को रोटी का टुकड़ा डालो और गाय को घास खिलाओ। कुत्ते को घास नहीं खिलाते और जितना रोटी का टुकड़ा कुत्ते को डालोगे, उतना ही हाथी को खिलाओगे तो

हाथी भूखा मर जाएगा । जितना हाथी खाता हो, उतना कुत्ते को खिलाना चाहोगे तो कुत्ता उसके बोझ से ही मर जाएगा । आदमी के साथ का व्यवहार भी अलग-अलग ढंग से होता है । समान के साथ मित्रता-स्नेह का व्यवहार होता है और छोटों के साथ करुणापूर्ण व्यवहार होता है । माँ के साथ अपने ढंग का व्यवहार तो बहन के साथ अपने ढंग का व्यवहार होगा । पिता के साथ अपने ढंग का तो पुत्र के साथ अपने ढंग का व्यवहार होगा । लेकिन देखेंगे तो सबमें एक ही परमात्म-तत्त्व ।"

जिसने भी उस तत्त्व को जान लिया है, तत्त्व का ज्ञान पा लिया है, उसे तो सर्वत्र वही, आकाश से भी सूक्ष्म चिदानंदघन परमेश्वर नजर आता है ।

जिसने भी उस तत्त्व को जान लिया है, तत्त्व का ज्ञान पा लिया है, उसे तो सर्वत्र वही, आकाश से भी सूक्ष्म चिदानंदघन परमेश्वर नजर आता है । अपने आपको भी वही रूप जान लेता है । उनके रोम-रोम से 'सर्वोऽहं' के आंदोलन स्वाभाविक रूप से फैलते रहते हैं ।

स्वामी रामतीर्थ ने भी उसी परम पद को पा लिया था और उनके श्रीमुख से 'ॐ... ॐ...' का, 'सर्वोऽहं...' का गान होता रहता था । रामतीर्थ की सेवा करनेवाला जो रसोइया था, उसको भी उनके साथ रहते-रहते 'ॐ...ॐ... सर्वोऽहं...' की भावनावाले परमाणु असर कर गये । उस रसोइये को भी आत्म-साक्षात्कार हो गया ।

एक बार रामतीर्थ कहीं पर गये थे । वह रसोइया शाम को छत पर चढ़कर नाच रहा था । लोगों ने आश्चर्य से पूछा : "यह क्या करता है ?"

वह बोला : "वाह ! मेरे मन का चरखा टूट गया, मैंने जान लिया अपने आपको । मैं ईश्वर हूँ... मैं ब्रह्म हूँ... मैं सदा से हूँ... मैं सर्वत्र हूँ... ।"

लोगों ने कहा : "क्या बकता है ?"

"हाँ, मैं सर्वत्र हूँ... सर्वव्यापक हूँ... ।"

"हम तुझे ब्रह्म तब मानेंगे जब तू इस छत से कूदकर दिखायेगा ।"

" मैं तो कूदने को तैयार हूँ लेकिन ओ मेरे भाइयों ! ऐसी कोई जगह बताओ, जहाँ मैं नहीं हूँ । छत के नीचे और छत के ऊपर सर्वत्र मैं ही हूँ । अगर आप कूदने के लिए कहते हो तो आकृति कूदेगी, मैं थोड़ा ही कूदूँगा ?"

सदा आत्मज्ञान की चर्चा सुनने से, आत्मभाव का चिंतन करने से उसे भी बोध हो गया था, आत्मज्ञान हो गया था ।

भगवान शंकर ने भी कहा है :

'कीटो भृंग इव ध्यानात् यथा भवति तादृशः ।'

जैसे कीड़ा भ्रमर का चिंतन करते-करते भ्रमर हो जाता है वैसे ही अज्ञानी जीव भी आत्मविचार करके, आत्मस्वरूप का चिंतन करके आत्मस्वरूप को पा लेता है ।

"मैं तो केवल यह जानना चाहता हूँ कि आपका वास्तविक स्वरूप क्या है ? मैं कौन हूँ ? अटल पदवी क्या है ?"

कोई अपने इष्ट का उपासक है और उन्हें रिझाने के लिए जप-तप करता है तो कभी उसे होता है कि भगवान प्रसन्न हो गये, आशीर्वाद दे गये, परन्तु वास्तव में इष्ट-दर्शन की उसकी प्रबल इच्छा थी तो उस सत्यसंकल्प आत्मा से उठनेवाली वृत्ति ही इष्टाकार हो गई और वह मानता है कि भगवान के दर्शन हो गये ।

ध्रुव ने भी विष्णुजी की उपासना की थी ।

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥

ध्रुव को भी भगवन् के दर्शन हुए ।

भगवान ने कहा : "ध्रुव ! तेरी तपस्या से मैं प्रसन्न हुआ हूँ । तू जो चाहे वह माँग ले ।"

ध्रुव ने कहा : "भगवन् ! मेरी मति से जो माँगूँगा, वह अल्प होगा । मैं तो केवल यह जानना चाहता हूँ कि आपका वास्तविक स्वरूप क्या है ? मैं कौन हूँ ? अटल पदवी क्या है ?"

भगवान् ने कहा : "वत्स ! ये बातें जान लेगा तो न मेरी कोई उच्चता रहेगी, न तेरी तुच्छता रहेगी और यह अटल पदवी भी नहीं रहेगी । जैसे सपने में ईश्वर भी दिखे और अटल पदवी भी दिखे पर है तो चैतन्य संवित् का फुरना ही । वैसे ही ये बातें उस चैतन्य आत्मा-संबंधी हैं, उसे तू जान लेगा तो 'मैं-तू... मेरा-तेरा...' सब गायब हो जायेगा । केवल वही बचेगा । हम न तुम... दफ्तर गुम ।"

जिसका 'मैं-तू... मेरा-तेरा...' छूट जाता है और आत्मा का बोध हो जाता है उसे फिर राग के समय राग न होगा और द्वेष के समय द्वेष नहीं सतायेगा । व्यवहारकाल में उसमें राग-द्वेष, लड़ना-झगड़ना दिखे तो भी भीतर रहेगा नहीं । इसलिए ज्ञानी त्रिलोकी को नष्ट कर दे तो भी पाप नहीं लगेगा और आप चींटी को भी मार डालोगे तो पाप लगेगा क्योंकि आपमें 'मेरा-तेरा' मौजूद है, स्वरूप का बोध नहीं हुआ है ।

जब तक भीतर 'मेरा-तेरा' मौजूद रहेगा, तब तक व्यवहार में भी कलह होगा । ज्ञानी की दृष्टि से तो कलह होते हुए भी वास्तव में कुछ होता नहीं है । इसलिए युद्ध करते हुए भी भगवान् श्रीकृष्ण की बँसी बज रही है । देखो, कैसे निश्चिंत हैं ! 'नरो वा कुँजरो वा' करवा रहे हैं फिर भी बोझा नहीं लगता है चित्त पर, क्योंकि वे अपने अकर्त्ता स्वभाव में स्थित हैं ।

ज्ञानी त्रिलोकी को नष्ट कर दें तो भी पाप नहीं लगेगा और आप चींटी को भी मार डालोगे तो पाप लगेगा क्योंकि आपमें 'मेरा-तेरा' मौजूद है, स्वरूप का बोध नहीं हुआ है ।

करता हुआ भी नहीं करे
वह प्राज्ञ जीवन्मुक्त है ।

ऐसे जीवन्मुक्त के चारों पुरुषार्थ- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सहज ही सिद्ध हो जाते हैं । वह स्वाभाविक ही धर्मात्मा हो जाता है, अपने-आप में विश्रांति पा लेता है ।

भगवान गोविंदपादाचार्य ने कहा : "यह उनकी धर्ममेधा समाधि है, जो अपने-आपमें शांत हैं, समाहितचित्त हैं । जैसे मेघ बेमाप पानी बरसा देता है ऐसे ही अपने आपमें विश्रांति पाये हुए, समाहितचित्त पुरुषों की सहज समाधि से धर्म बरसता है ।"

ऐसे महापुरुषों की सेवा से हमें अनंत पुण्य मिलते हैं । हमें पुण्य मिलते हैं तो उनके पुण्य कम हो जायेंगे ऐसा नहीं है । उन्होंने ऐसे पद को पा लिया है जहाँ पाना-खोना सब समाप्त हो जाता है, स्वप्नवत् हो जाता है । इस संसाररूपी स्वप्न से जागने के लिए ऐसे महापुरुषों का उपदेश है कि उस आत्मदेव का ही ध्यान और उसका ही चिंतन करो ।

जो ब्रह्म सबमें देखते हैं
ध्यान धरते ब्रह्म का ।
भवजाल से हैं छूटते
साक्षात् करे हैं ब्रह्म का ॥
नर मूढ़ पाता क्लेश है
अपना पराया मानकर ।
ममता अहंता त्याग दे
सर्वात्म अनुसंधान कर ॥

❀

सबके आदर्श श्रीराम

[दिनांक : ९-४-९५ रामनवमी, अहमदाबाद आश्रम ।]

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम् ।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम् ॥

'शान्त, सनातन, अप्रमेय (प्रमाणों से परे) निष्पाप, मोक्षरूप, परम शान्ति देनेवाले, ब्रह्मा, शम्भु और शेषजी से निरन्तर सेवित, वेदान्त के द्वारा जानने योग्य, सर्वव्यापक, देवताओं में सबसे बड़े, माया से मनुष्यरूप में दिखनेवाले, समस्त पापों को हरनेवाले, करुणा की खान, रघुकुल में श्रेष्ठ तथा राजाओं के शिरोमणि, राम कहलानेवाले जगदीश्वर की मैं वन्दना करता हूँ ।' (श्रीरामचरित० : सुन्दरकाण्ड, श्लोक-१)

जब-जब होइ धरम कै हानी ।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥३॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी ।
सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ॥
तब-तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा ।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ॥४॥

'जब-जब धर्म का ह्रास होता है और नीच अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं और वे ऐसा अन्याय करते हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता तथा ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी कष्ट पाते हैं, तब-तब वे कृपानिधान प्रभु भाँति-भाँति के दिव्य शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं ।'

(श्रीरामचरित० : सुन्दरकाण्ड, दोहा-१२१)

निर्गुण-निराकार परब्रह्म परमात्मा ही दुष्टों के दमन एवं सज्जनों के रक्षार्थ, इस पावन धराधाम भारत भूमि पर, पुण्यतोया सरयू नदी के तट पर स्थित अवधपुरी में सगुण-साकार होकर श्रीराम के रूप में , चैत्रमास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को अवतीर्ण हुए । उसी पावन दिवस को 'श्रीरामनवमी' के नाम से सारे भारतवर्ष में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है ।

पर्व मांगल्य

ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्न काल में धधकती धूप में, संसार-ताप से तप्त जीवों को, मर्यादा भूलकर राग-द्वेष और ईर्ष्या की अग्नि में जलनेवाले मानव को, मर्यादा से जीकर शीतलता पाने का संदेश देनेवाला जो अवतार है वही मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामावतार है ।

लाखों-लाखों वर्ष हो गये, विद्वान मानते हैं कि नौ लाख वर्ष हो गये लेकिन श्रीराम अभी-भी जनमानस के हृदय-पटल से विलुप्त नहीं हुए । क्यों ? क्योंकि श्रीराम का आदर्श जीवन,

श्रीरामजी का आदर्श चरित्र, उस जीवन की कहानी है जो सब मानव व्यतीत कर रहे हैं । रामायण में वर्णित आदर्श चरित्र विश्वसाहित्य में मिलना दुर्लभ है ।

आदर्श पुत्र देखना हो तो श्रीरामजी हैं । राज्याभिषेक करते-करते पिता ने वनवास दिया तो उसे भी श्रीरामजी ने सहर्ष स्वीकार किया । सीताजी मंगल मना रही हैं, माँ कौशल्या मंगल गीत गाते हुए तैयारियाँ कर रही हैं, यज्ञ-हवनादि हो रहे हैं क्योंकि राम का राज्याभिषेक होनेवाला है । ऐसे में श्रीराम दौड़ते-दौड़ते माँ कैकेयी के भवन की ओर जाते हैं और माँ कैकेयी की आँखों पर पीछे से हाथ रख देते हैं ।

माँ कैकेयी : "मैं पहचान गयी कि तुम मेरे राम हो, हाथ हटाओ ।"

श्रीराम : "माँ ! मैं ऐसे नहीं हटाऊँगा, पहले कुछ दो ।"

"मेरे प्यारे राम ! तुम्हें देने जैसी चीज तो पूरे विश्व में भी नहीं है ।"

"माँ ! तुम मुझे इतना प्रेम करती हो अतः आज तुम्हारा राम जो माँगता है वह देने की कृपा करो न ! तभी तो तुम्हारा प्रेम पक्का माना जायेगा ।"

"मेरे राम ! मेरे पास ऐसी कोई चीज नहीं जो मैं तुम्हें दे सकूँ । राम ! तुम तो राम ही हो । तुम्हें दे सकूँ ऐसी चीज मुझे त्रिभुवन में भी नहीं दिखती । "

"माँ ! साधु-संतों के संग के लिए, सज्जनों के हित के लिए एवं दुष्टों के विनाश के लिए मैं वनगमन कर सकूँ, इसलिए माँ ! मेरे लिए तुम अपयश सहो, मुझे वनवास दो, बस यही तुमसे माँगता हूँ ।"

"हे राम ! अगर इससे तुम्हारा प्रिय होगा, तुम्हें आनंद मिलेगा तो मैं तुम्हारे लिए अपयश सहने को भी तैयार हूँ ।"

लोग कहते हैं कि 'कैकेयी ऐसी थी... वैसी थी...' लेकिन अगर श्रीराम से पूछें कि 'कैकेयी कैसी हैं' तो श्रीरामजी यही कहते :

"जिन्होंने साधुओं का संग नहीं किया, वे मूढ़ लोग ही मेरी माँ कैकेयी को तुच्छ समझते हैं । "

श्रीराम के वनवास के मुख्य कारण मंथरा के लिए भी श्रीराम के हृदय में विशाल प्रेम है ।

रामायण का कोई भी पात्र तुच्छ नहीं है, हेय नहीं है । श्रीराम की नज़र में तो रीछ और बंदर भी तुच्छ नहीं हैं । जामवंत, हनुमान, सुग्रीव, अंगदादि सेवक भी उन्हें इतने ही प्रिय हैं जितने भरत, शत्रुघ्न, लखन और माँ सीता । माँ कौशल्या एवं सुमित्रा जितने प्रिय हैं उतनी ही शबरी श्रीराम को प्यारी लगती है । वृद्धावस्था के कारण आँखों से मीठे बेर पहचान नहीं पाती इसलिए बेर चख-चखकर खिलानेवाली शबरी को श्रीराम माँ कौशल्या से कम निगाह से नहीं देखते ।

आदर्श शिष्य, आदर्श गुरुभक्त देखना हो तो श्रीरामजी को देखो :

प्रातःकाल उठि कै रघुनाथा ।
मातु पिता गुरु नावहिं माथा ॥
गुरु तें पहिलेहिं जगतपति जागे रामु सुजान ॥

गुरु-आश्रम में रामजी गायें चराने जाते हैं, बुहारी करते हैं, अतिथियों की सेवा करते हैं, उनका स्नेह से सम्मान करते हैं । उनके जैसा आदर्श सेवक मिलना दुर्लभ है ।

आदर्श भ्राता देखना हो तो श्रीराम हैं : 'भरत को राज्य मिलेगा' यह सुनकर श्रीराम अत्यंत हर्षित होते हैं और लक्ष्मण को शक्ति लग जाने पर श्रीराम अत्यंत कारुणिक विलाप करते हैं । बाल्यकाल में खेल-खेल में भी श्रीराम ने भरत को जिताया है और स्वयं हार स्वीकार की है । कैसा आदर्श है उनका भ्रातृप्रेम !

आदर्श पति देखना हो तो श्रीरामजी हैं । पत्नी के लिए दर-दर की ठोकरें खा रहे हैं, वृक्षों, लताओं

से अपनी प्रिया सीता का पता पूछ रहे हैं और सीता की खोज में यत्र, तत्र, सर्वत्र वानरों को भेज रहे हैं ।

आदर्श वनवासी देखो तो श्रीराम हैं : कंदमूल, फल खाकर भी कभी फरियाद नहीं की कि 'हाय रे... ये जंगली फल खा-खाकर थक गये... कब चौदह वर्ष पूरे होंगे... ?' कभी रामजी ने विलाप या विषाद किया भी तो लक्ष्मण के लिए किया, माँ सीता के लिए किया, अपने लिए कभी नहीं किया ।

मारीच स्वर्णमृग बनकर आया । श्रीरामजी उस मृग को भी पहचानते हैं कि उस मृग को, मारीच को, मेरे लिए कितना स्नेह है ! रामजी स्नेह के बदले में स्नेह देते-देते उस मारीच के पीछे जाते हैं और श्रीराम के हाथों मरने की उसकी मनोकामना पूरी करते हैं ।

शत्रु भी जिनके गुणगाना गाये बिना नहीं रह सकते ऐसे श्रीरामचंद्रजी हैं । रणभूमि में आखिरी श्वास गिनता हुआ रावण जब संसार से अलविदा हो रहा था तब श्रीरामचंद्रजी अपने शिविर में अश्रुपूरित नेत्रों से शोकमग्न बैठे हुए थे ।

लक्ष्मणजी ने आकर पूछा : "भैया ! हमें विजय प्राप्त हुई है । फिर भी आपकी आँखें गीली क्यों हैं ? आपके चेहरे पर उदासी क्यों है ?"

श्रीराम कहते हैं : "लखन ! आज धरती से एक महान् योद्धा रावण जा रहा है ।"

हे राम ! कैसा है आपका दिल !

लक्ष्मणजी : "हे प्रभु ! यह क्या कह रहे हैं ? माँ सीता का अपहरण करनेवाले, इतना-इतना मौका दिया उसे सुधरने एवं समझौते का, फिर भी एक भी बात न माननेवाले उस नराधम के लिए आप रो रहे हैं ?"

राम : "परनारी-हरण के उस दोष के अलावा लंकेश में अन्य बहुत सारे गुण थे । वह पंडित और विद्वान था, शिवभक्त था, महान योद्धा था । लखन ! आज इस धरती से एक पंडित, विद्वान, शिवभक्त और एक महान् योद्धा लंकाधिपति रावण प्रयाण कर रहा है ।"

लक्ष्मणजी चकित हो गये और भागे रणभूमि की ओर । जहाँ रावण भूमि पर पड़ा आखिरी श्वासें गिन रहा है, शरीर छिन्न-भिन्न है, आँखों के सामने मृत्यु दिखाई दे रही है, नाभि में तीर लगा है ऐसी दयनीय स्थिति में पड़ा है रावण ।

नाभि में वासना-केन्द्र है, काम-केन्द्र है । काम मरे बिना राम में नहीं समायेगा रावण । कामनाएँ मिटे बिना राम के स्वरूप का भान संभव नहीं, उसी कामकेन्द्र पर बाण लगा है । लक्ष्मणजी पहुँचे उसके पास और बोले :

"हे लंकेश ! श्रीरामचंद्रजी तुम्हारी विदा में आँसू बहा रहे हैं ।"

लक्ष्मणजी को था कि रावण श्रीराम की महिमा को नहीं जानता, लेकिन रावण जानता था । रावण का पुराना नाता था श्रीराम से और श्रीराम का अनादि काल से नाता है प्राणीमात्र से । रामजी सबको जानते हैं । सबके आत्मस्वरूप श्रीराम ही हैं । प्राणीमात्र को सही राह बताने के लिए ही वे साकार रूप में अवतरित होते हैं ।

लक्ष्मणजी की बात सुनकर वह रावण कटी भुजाओं से, छिन्न-भिन्न हुए तन से, जैसे-तैसे अपनी दोनों भुजाओं को मिलाकर हाथ जोड़ता है और पलकें झुकाकर टूटी-फूटी वाणी में कहता है क्योंकि अब

श्रीराम वशिष्ठजी महाराज के श्रीचरणों में विनम्र भाव से बैठकर सत्संग श्रवण करते हैं और कहते हैं कि 'हे मुनिशार्दूल ! आपके वचन कानों के भूषण हैं जिन्हें सुनकर मन अघाता नहीं । गुरुवर ! आपके वचन ऐसे लगते हैं मानो चकोर के लिए चंद्रमा और मीन के लिए नीर ।'

जिह्वा भी साथ छोड़ रही है ।

रावण कहता है : "तभी तो वे... श्रीराम... हैं। मेरा... श्रीराम... को... बार-बार... प्र...णा...म... है... ।"

जिन श्रीराम के तीरों से लंकेश छिन्न-भिन्न हुआ है, जिन श्रीराम के सेवक ने लंका में आग लगाई है, जिन श्रीराम के छोटे-छोटे भालू-बंदरों से लंका के असुर नष्ट हुए हैं, उन श्रीराम के लिए रावण के हृदय में कितना आदर है ! कैसे रहे होंगे रामायण के वे राम !

आदर्श राजा देखना हो तो श्रीराम हैं । प्रजा के संतोष के लिए, प्रजा के विश्वास-संपादन के लिए श्रीरामजी राज्यसुख, राज्यवैभव और गृहस्थसुख का त्याग करने में भी संकोच नहीं करते ।

राज्य चलाने के लिए श्रीरामजी प्रजा से कर तो लेते हैं किन्तु यह ध्यान में रखकर कि प्रजा पर बोझ न बढ़े और कर का धन अपने उपभोग के लिए नहीं, वरन् प्रजा के उपयोग के लिए ही व्यय हो ।

कोई सौ-सौ गल्तियाँ करता है फिर भी भीतर से श्रीरामजी उसके प्रति घृणा नहीं रखते और किसीके पास केवल एक सद्‌गुण ही हो तो भी श्रीरामजी उसको भूलते नहीं हैं। श्रीराम छोटे-से-छोटे, वन में घूमनेवाले व्यक्तियों की भी सर्वांगीण उन्नति चाहते हैं और बड़े-से-बड़े राजाओं को भी वे मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। यहाँ तक कि तपस्वी, यति और योगियों के लिए भी आदर्श श्रीराम हैं ।

आदर्श श्रोता भी श्रीराम ही हैं। वशिष्ठजी महाराज के श्रीचरणों में विनम्र भाव से बैठकर सत्संग श्रवण करते हैं और कहते हैं कि 'हे मुनिशार्दूल ! आपके वचन कानों के भूषण हैं जिन्हें सुनकर मन अघाता नहीं । गुरुवर ! आपको तो श्रम पड़ता है लेकिन मुझे तो आपके वचन ऐसे लगते हैं मानो चकोर के लिए चंद्रमा और मीन के लिए नीर ।'

... और आदर्श वक्ता देखना हो तो वे भी श्रीराम ही हैं । सभा में पहले बोलनेवाले को खोजना हो तो श्रीरामचंद्रजी हैं । रामजी जब बोलते हैं मधुर बोलते हैं, सारगर्भित बोलते हैं, आप अमानी होकर एवं दूसरों को मान देकर बोलते हैं और सान्त्वनाप्रद बोलते हैं ।

रामनवमी का संदेश कर्त्तव्य पर भावनाओं की बलि देने का है । यह प्रेमास्पद में अभेद का पर्व है, यह आदर्श मानव बनने की प्रेरणा देनेवाला पर्व है, मानव महेश्वर का स्वरूप है यह समझानेवाला पर्व है एवं प्रत्येक जीव ईश्वर का ही अंश है यह बतानेवाला पर्व है ।

विनम्रता की मूर्ति देखना हो तो श्रीरामचंद्रजी : परशुराम जी खूब क्रोधित होकर बोलते हैं फिर भी श्रीराम बड़ी विनम्रता से कहते हैं कि 'मैं दशरथनंदन राम हूँ और आप तो श्री परशुरामजी हैं। महेन्द्र पर्वत पर तप करते हैं। दास राम आपको प्रणाम करता है ।'

हद कर दी रामावतार ने ! छोटे-से-छोटे जीव के आगे, छोटे-से-छोटे व्यक्ति के आगे श्रीरामजी को झुकने में, प्रणाम करने में कोई संकोच नहीं होता ।

न्यायाधीश के रूप में देखो तो श्रीरामजी सबके सिरमौर हैं । रामराज्य में कुत्ते को भी न्याय मिलता है । एक दिन श्रीरामजी लक्ष्मणजी से कहते हैं : "लक्ष्मण ! आज कोई न्याय के लिए राजदरबार में नहीं आया । जाओ, तुम बाहर जाकर देखो, कोई हो तो उसे ले आओ ।"

कैसे हैं ये न्यायाधीश ! लक्ष्मणजी ने बाहर जाकर देखा तो एक कुत्ता घायल होकर 'कें... कें...' कर रहा था । लक्ष्मणजी ने उससे कहा :

"हे सारमेय ! तुम्हें क्या कष्ट है ? चलो, चलकर हमारे प्रभु श्रीरामजी को सुनाओ । वे तुम्हारा कष्ट अवश्य दूर करेंगे । "

कथा कहती है कि कुत्ता आया किन्तु बाहर द्वार पर ही खड़ा रहा।

लक्ष्मणजी : "चलो, भीतर राजदरबार में।"

कुत्ता : "कुत्ते की योनि में मंदिरों, आश्रमों एवं राजदरबार में जाने का निषेध है।"

कुत्ते के मुँह से यह सुनकर लक्ष्मणजी को आश्चर्य हुआ कि यह कुत्ता है कि पंडित ! उन्होंने जाकर श्रीरामजी को पूरे समाचार दिये। श्रीरामचंद्रजी अपने सिंहासन से उठकर द्वार पर आये और कुत्ते से उसकी इस दयनीय दशा का हाल पूछा तब वह कुत्ता बोला : "हे प्रभु ! मैं सड़क पर बैठा था और एक साधु मुझे धक्का मारकर नाली में फेंक गया। इसी वजह से मेरी यह हालत हुई है।"

उस साधु को बुलाया गया और फिर श्रीरामजी उस कुत्ते से बोले : "हे सारमेय ! तुम क्या सजा देना चाहोगे इस साधु को ?"

कुत्ता : "हे राजन् ! हे प्रभु ! उसे मठाधीश बना दिया जाये।"

और लोगों को हुआ कि यह सजा है कि मजा ? श्रीरामजी ने कुत्ते से इसका रहस्य पूछा।

कुत्ता बोला : "पूर्वजन्म में मैं स्वयं मठाधीश था और दान का, धर्मादे का माल खाता था। उसीके फलस्वरूप मेरी यह दशा हुई।"

अद्भुत है श्रीरामजी का न्याय ! उनके दरबार में एक चाण्डाल पशु तक को न्याय मिलता है !

आदर्श पुत्र, आदर्श भ्राता, आदर्श पति, आदर्श राजा, आदर्श शिष्य... जितने भी आदर्श हैं वे सारे आदर्श यदि किसीमें हैं तो वे श्रीरामावतार में हैं।

श्रीरामजी कभी महलों में रहते हैं कभी झोंपड़े में, कभी मोहनभोग पाते हैं तो कभी कंदमूल, कभी साधु-संतों से सम्मानित होते हैं तो कभी दुर्जनों से अपमानित। किन्तु प्रत्येक अवस्था में श्रीरामजी की समता निराली है। श्रीरामजी स्थितप्रज्ञ हैं, जीवन्मुक्त हैं, साक्षी-स्वरूप हैं। वे कभी सुखी नहीं होते और कभी दुःखी नहीं होते वरन् सदैव सुख और दुःख के साक्षी रहते हैं।

ऐसे श्रीराम के अवतार-ग्रहण का पावन दिवस ही श्रीरामनवमी है। रामनवमी का संदेश कर्त्तव्य पर भावनाओं की बलि देने का है। यह प्रेमास्पद में अभेद का पर्व है, यह आदर्श मानव बनने की प्रेरणा देनेवाला पर्व है, मानव महेश्वर का स्वरूप है यह समझानेवाला पर्व है एवं प्रत्येक जीव ईश्वर का ही अंश है यह बतानेवाला पर्व है।

श्रीराम के जीवन का कोई भी अंश ऐसा नहीं, जिसे मनुष्य अपने जीवन में न अपना सके। उनका पावन चरित्र मानवमात्र के लिए आदर्श है। ऐसे मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम के श्रीचरणों में हमारे कोटि-कोटि प्रणाम हैं...

❀

श्रीरामभक्त हनुमान

[दिनांक : १५-४-९५ हनुमान जयंती, हिंमतनगर आश्रम।]

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि ॥

'अतुल बल के धाम, सोने के पर्वत सुमेरु के समान कान्तियुक्त शरीर वाले, दैत्यरूपी वन को ध्वंस करने के लिए अग्निरूप, ज्ञानियों में अग्रगण्य, सम्पूर्ण गुणों के निधान, वानरों के स्वामी, श्रीरघुनाथजी के प्रिय भक्त, पवनपुत्र श्री हनुमानजी को मैं प्रणाम करता हूँ।' (श्रीरामचरित० : सुन्दरकाण्ड, श्लोक-३)

वानरश्रेष्ठ केसरी ने प्राणशक्ति की उपासना की और साथ में भगवान शिव की आराधना भी की, जिसके फलस्वरूप भगवान शंकर के अंश से वायु के द्वारा कपिराज केसरी की पत्नी माता अंजना के गर्भ से श्री हनुमानजी का प्रागट्य हुआ।

उनका 'हनुमान' नाम कैसे पड़ा ? इसकी भी एक रोचक कथा है ।

यौगिक सामर्थ्य को साथ लेकर जन्मे बालक हनुमान ने जन्म के कुछ समय के पश्चात् ही उदित होते हुए भगवान भास्कर को कोई लाल-लाल फल समझकर उसे निगलने के लिए सूर्य की ओर चल पड़े । बाल हनुमान द्वारा फल समझकर निगले जाने पर सारी पृथ्वी पर हाहाकार मच जायेगा, यह सोचकर देवताओं ने इन्द्रदेव से प्रार्थना की । इन्द्र ने अपने वज्र से बाल हनुमान पर प्रहार किया । 'हनु' अर्थात् 'ठोड़ी' के ऊपर वार लगने से और उसके घायल होने से बालक का नाम 'हनुमान' रखा गया ।

वज्रप्रहार से बालक हनुमान मूर्च्छित हो गये । यह देखकर वायुदेव कुपित हो गये और वायु स्थगित हो गयी । श्वास रुकने से देवता भी व्याकुल हो उठे । अन्त में हनुमान को सभी लोकपालों ने अमर होने तथा अग्नि-जल-वायु आदि से अभय होने का वरदान देकर वायुदेव को संतुष्ट किया । अग्निदेव का वरदान लंकादहन के समय, वरुणदेव का वरदान लंका को लाँघने के समय और पवनदेव का वरदान संजीवनी बूटी लाने के समय काम आया ।

आजन्म नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्रीहनुमानजी व्याकरण के महान् पण्डित, वेदज्ञ, ज्ञानशिरोमणि, विचारशील, तीक्ष्णबुद्धि, अतुल पराक्रमी, निपुण संगीतज्ञ एवं गायक तो हैं, साथ ही साथ अपने स्वामी श्रीराम के प्रति अनन्य निष्ठा एवं उनकी स्वामी भक्ति अतुलनीय है । अपने स्वामी प्रभु श्रीराम के प्रति अनन्य विनयभाव था पवनसुत का एवं अपने स्वामी के कार्य प्रति अनन्य उत्साह भी । सेवकों में नाम लिया जाये तो केसरीनंदन सर्वोपरी हैं ।

संजीवनी लाने के लिए पूरे पर्वत को ही उठाकर ले आये थे । 'क्या करूँ ! मुझे संजीवनी का पता ही न चला इसलिए फिर से पूछने आया हूँ,' यह कहकर अपने स्वामी को तंग नहीं किया, वरन् कार्य करके ही लौटे । श्रीरामकार्य में कितनी भी बाधाएँ आयीं या प्रलोभन आये उन पर विजय प्राप्त करते हुए निरंतर आगे ही बढ़ते रहे श्रीहनुमान !

समुद्र पार करते वक्त मैनाक पर्वत ने प्रार्थना की विश्राम के लिए तो हनुमानजी ने उसे हाथ से छू दिया, फिर प्रणाम करके बोले : "भाई ! श्रीरामचन्द्रजी का काम किये बिना मुझे विश्राम कहाँ ?"

हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम ।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम ॥

कैसी अनन्य निष्ठा एवं तत्परता है हनुमानजी की ! कार्य पूरा होने पर अर्थात् माता सीता का पता लगाकर एवं लंकादहन कर लौटने पर भी हनुमानजी स्वयं शांत खड़े रहते हैं । हनुमानजी की कितनी विनम्रता है ! विद्या, बुद्धि, ज्ञान एवं पराक्रम से संपन्न होने पर भी अपने पराक्रम की बड़ाई स्वयं नहीं करते हैं क्योंकि अभिमान तो उन्हें छू तक नहीं गया । प्रभु श्रीराम द्वारा पूछने पर कि 'हनुमान ! त्रिभुवनविजयी रावन की लंका को तुम कैसे जला सके ?' तब हनुमानजी कहते हैं :

सो सब तव प्रताप रघुराई ।
नाथ न कछु मोरि प्रभुताई ॥

'यह सब तो हे श्रीरघुनाथजी ! आप ही का प्रताप है । हे नाथ ! इसमें मेरी प्रभुता (बड़ाई) कुछ भी नहीं है ।'

कितनी विनम्रता ! कितनी प्रीति ! कैसी अनन्य निष्ठा और अतुलनीय भक्ति है पवनसुत हनुमान में ! ऐसे भक्तशिरोमणि हनुमानजी के लिए प्रभु श्रीराम को भी कहना पड़ा :

सुनु कपि तोहि समान उपकारी ।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ।।
प्रति उपकार करौं का तोरा ।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा ।।
सुनु सुत तोहि उरिन में नाहीं ।
देखेऊँ करि बिचार मन माहीं।।

'हे हनुमान ! सुन । तेरे समान मेरा उपकारी देवता, मनुष्य अथवा मुनि कोई भी शरीरधारी नहीं है । मैं तेरा प्रत्युपकार तो क्या करूँ, मेरा मन भी तेरे सामने नहीं हो सकता । हे पुत्र ! सुन । मैंने मन में खूब विचार करके देख लिया कि मैं तुझसे उऋण नहीं हो सकता ।'

धन्य हैं श्री हनुमानजी ! श्री हनुमान जयंती का पावन दिन यही संदेश देता है कि तुम भी संयमी बनो, सदाचारी बनो, उद्यमी बनो । तुम पुरुषार्थी बनो, धैर्यवान् और शौर्यवान् बनो तो तुम्हारे समस्त संकटों का नाश हो जायेगा । हनुमानजी की तरह विद्वान बनो तो तुम्हारी अज्ञानता का नाश हो जायेगा । हनुमानजी की तरह विनम्र बनो एवं अहं को पराजित करो तो प्रभु श्रीराम के प्रीतिभाजन बन जाओगे ।

❀

व्यक्ति की परख रंगों से

[दिनांक : १७-३-९५ होली शिविर, सुरत आश्रम ।]

मानव के सर्वांगीण विकास में उसका व्यक्तित्व एक अहम् भूमिका अदा करता है और उसके व्यक्तित्व के विकास में रंगों का अपना अलग महत्त्व है । यदि किसी व्यक्ति को पहचानना हो, उसके स्वभाव का आँकलन करना हो, उसके व्यक्तित्व का अनुमान लगाना हो तो वह उसकी वेशभूषा एवं उसके द्वारा पसंद किये गये रंगों के आधार पर सहजता से लगाया जा सकता है ।

एक सज्जन और शांत स्वभाव की महिला ने घर बदला और नये घर में डिज़ाइनयुक्त कलर करवाया... लाल, गुलाबी, पीला आदि । कुछ दिनों के बाद उस महिला का स्वभाव बड़ा चिड़चिड़ा हो गया, खिन्न हो गया । इस बात की जाँच की गयी कि वह नये मकान में आकर चिड़चिड़े स्वभाव की क्यों हो गयी ? जाँच करते-करते पता चला कि उसके निजी कक्ष की दीवारों के रंग का उसके मन पर असर हुआ है ।

आपके मन पर रंगों का प्रभाव पड़ता है और आपके स्वभाव के अनुसार ही आपको कुछ विशेष रंग अच्छे लगते हैं । आपको किस रंग के वस्त्र पसंद हैं ? इसके आधार पर आपके स्वभाव को मापा जा सकता है । जैसे -

भगवा रंग : जिसको गेरू से रंगे भगवा रंग के वस्त्र (मिल के नहीं) पसंद हैं तो समझो कि वह व्यक्ति संयमप्रिय है, तपप्रिय है और भगवा रंग तप करने में मदद भी करता है । ऐसा व्यक्ति स्वच्छता पसंद करता है और उसके स्वभाव में साधुता का गुण प्रबल होता है यह भगवे रंग का प्रभाव है ।

लाल रंग : अगर आपको लाल रंग पसंद है या आप लाल रंग के वस्त्र पहनते हैं तो यह मांगल्य का सूचक है । लाल रंग अर्थात् तिलक (कंकु) लगाने वाला या गुलालवाला लाल रंग । गाढ़ा लाल नहीं । एकदम गाढ़ा लाल रंग तो कामुकता की खबर देता है । लेकिन कुंकुम, गुलाल आदि को मंगलमय माना जाता है इसीलिए तिलक करने और पूजन में इसका प्रयोग किया जाता है । ऐसा रंग शौर्यप्रियता का प्रतीक है, विजय के संस्कार की प्रेरणा देता है

यह कलर ।

पीला रंग : पीला रंग ज्ञान, विद्या, सुख-शांतिमय स्वभाव एवं विद्वत्ता का प्रतीक है । पीला अर्थात् हल्दीमय पीला ।

हरा रंग : अगर आप हरा रंग पसंद करते हैं या हरी-भरी प्रकृति को पसंद करते हैं तो इससे सुन्दरता, मन की शांति, हृदय की शीतलता एवं उद्योगी, चुस्त और आत्मविश्वासी चित्त की खबर आती है ।

नीला रंग : अगर किसीको आसमानी नील वर्ण पसंद है तो इससे सिद्ध होता है कि उसके चित्त में औदार्य है, व्यापकता है । नील वर्ण पसंद करनेवाले व्यक्ति में पौरुष, धैर्य, सत्य और धर्मरक्षण करने की वृत्ति दृढ़ होती है ।

एक संन्यासी गये एक प्रसिद्ध स्कूल में और उन्होंने बच्चों से पूछा :

"श्रीकृष्ण का वर्ण श्याम क्यों है ?"

सब बच्चे और शिक्षक ताकते रह गये, लेकिन कुछ देर बाद पूरे स्कूल की लाज रखनेवाला एक विद्यार्थी उठा और बोला : "भगवान श्रीकृष्ण का वर्ण श्याम इसलिए है कि श्रीकृष्ण व्यापक हैं ।"

संन्यासी : "इस बात का प्रमाण क्या ?"

विद्यार्थी : "जो व्यापक वस्तु होती है वह नील वर्ण की होती है जैसे - सागर और आकाश व्यापक हैं अतः उनका रंग नीला है । ऐसे ही परमात्मा व्यापक हैं । उनकी व्यापकता को बताने के लिए उनके साकार श्रीविग्रह का रंग नील वर्ण बताया गया है ।"

पूछनेवाले संन्यासी थे स्वामी विवेकानंद और उत्तर देनेवाला विद्यार्थी था मद्रास के होनहार मुख्यमंत्री राजगोपालाचार्य ।

श्वेत रंग : इसमें सब रंगों का आंशिक समावेश पाया जाता है । यह रंग पवित्रता, शुद्धता, शांतिप्रियता और विद्याप्रियता का प्रतीक है ।

काला रंग : काला रंग शोक, दुःख, निराशा, पतन, पलायनवादिता और स्वार्थप्रियता को दर्शाता है ।

मटमैला रंग : मटमैला रंग गंभीरता, विनम्रता, सौम्यता, लज्जा और कर्मठता का प्रतीक माना गया है ।

इस प्रकार रंग मानव स्वभाव का चित्रण करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।

ये सब वस्त्रों के रंग तो ठीक हैं... अच्छे हैं लेकिन धोते-धोते फीके पड़ जाते हैं जबकि आत्मरंग ऐसा रंग है जो कभी फीका नहीं पड़ता, बदरंग नहीं होता । श्री भोलेबाबा कहते हैं :

सब रंग कच्चे जांय उड़
यक रंग पक्के में रंगे ।

... और वह पक्का रंग है - अद्वैत आत्मतत्त्व का रंग, परमात्म-रंग ।

मीरा ने भी कहा :

श्याम पिया मोरी रंग दे चुनरिया,
ऐसी रंग कि रंग नाहीं छूटे,
धोबी धोये चाहे सारी उमरिया...

हमारी इन्द्रियों पर, हमारे मन पर संसार का रंग पड़ता है । रंग लगता भी है और बदलता भी रहता है लेकिन भक्ति और ज्ञान का रंग यदि एक बार भी लग जाये तो मृत्यु के बाप की भी ताकत नहीं है कि उस भक्ति और ज्ञान के रंग को छुड़ा सके ।

❀

❀ गुरुभक्तियोग ईश्वरज्ञान के लिए सबसे सरल, सबसे निश्चित, सबसे शीघ्रगामी, सबसे सस्ता, भयरहित मार्ग है । आप सब इसी जन्म में गुरुभक्तियोग के द्वारा ईश्वरज्ञान प्राप्त करो ।

❀ गुरुभक्तियोग का आश्रय लेकर आप अपनी खोई हुई दिव्यता को पुनः प्राप्त करो, सुख-दुःख, जन्म-मृत्यु आदि सब द्वन्द्वों से पार हो जाओ । *('गुरुभक्तियोग' में से)*

बाजारु शीतल पेयों से सावधान !

ग्रीष्म ऋतु की शुरूआत होते ही आजकल समाज में खाद्य एवं विशेषकर पेय पदार्थों के रूप में शीतल पेयों का बोतलबन्द अम्बार यत्र-तत्र-सर्वत्र रेस्तरां व होटलों में दिखाई पड़ता है जिन्हें पीकर अपनी प्यास बुझाना बड़प्पन समझा जाता है। लेकिन क्या आप जानते हैं कि ये शीतल पेय पूर्णतः शुद्ध एवं पवित्र नहीं होते हैं ?

बोतलों में पैक इन रंग-बिरंगे कोल्ड्रिंक्स की निर्माणविधि के बारे में अब तक जो देखने-सुनने व पढ़ने में आया वह इस प्रकार है :

कोल्ड्रिंक्स की बोतलें फेक्ट्री में सामूहिक रूप से मशीनों द्वारा धोई जाती हैं जो कि महज एक औपचारिकता होती है। कई निर्माताओं द्वारा तो जूठी बोतलों में ही यह पेय पदार्थ भरकर बेचा जाता है। शीतल पेयों के निर्माण में अनेक बार दूषित जल का उपयोग किया जाता है, जिसमें रहनेवाले बैक्टेरिया व कीड़े अनेक बार बोतलों में बन्द होकर पीनेवालों के मुँह तक पहुँच जाते हैं।

इन पेयों के निर्माण में प्रयुक्त होने वाले घटिया रासायनिक रंगों से केन्सर, ट्यूमर जैसी घातक बीमारी तथा गुदा, यकृत में घाव अथवा गर्भपात की संभावना बनी रहती है।

शीतल पेय निर्माण में प्रयुक्त होनेवाले रसायनों का भी अन्ततः शरीर पर दुष्प्रभाव ही पड़ता है और अनेक निर्माता तो अत्यधिक लाभ अर्जित करने की दृष्टि से इसमें मरे हुए पशुओं की हड्डी-चर्बी-रक्त आदि का भी उपयोग करते हुए पकड़ाये गये हैं। इन शीतल पेयों में एसिडों की इतनी भरमार होती है कि इनका हर एक घूँट पाचनक्रिया में गड़बड़ी उत्पन्न कर पोषक तत्त्वों व दाँतों का नाश करता है।

कृत्रिम रंगों तथा कृत्रिम मिठास से बने इन शीतल पेयों में 'ब्रोमिनेटेड वेजीटेबल ऑइल' (B.V.O.) नामक प्रतिबंधित रसायन का भी उपयोग किया जाता है, जिससे केंसर जैसी घातक बीमारी होने का भय बना रहता है। विश्व के लगभग १२९ देशों में 'ब्रोमिन युक्त वनस्पति तेल' का प्रयोग वर्जित घोषित है लेकिन भारत सरकार की सुस्त कानून व्यवस्था का लाभ लेकर, स्वास्थ्य मंत्रालय की चेतावनी के बाद भी अनेक लोकप्रिय शीतल पेयों के निर्माता अभी भी धड़ल्ले से B.V.O. का उपयोग कर रहे हैं।

ऐसे दूषित तत्त्वों, प्रदूषित जल एवं अभक्ष्य पदार्थों के रासायनिक मिश्रण से तैयार किये गये अपवित्र बाजारु शीतल पेय हमारे स्वास्थ्य तथा पवित्रता पर प्रहार करते हैं। अतः इनका परित्याग कर हमें आयुर्वेद एवं भारतीय संस्कृति में वर्णित पेय पदार्थों से ही शीतलता प्राप्त करनी चाहिये। हम अपने पाठकों के लिये स्वास्थ्य, ताजगी एवं तन्दुरुस्तीवर्द्धक कुछ शीतल पेयों की निर्माणविधि यहाँ बतला रहे हैं :

१. दही व पानी में आवश्यकतानुसार शक्कर एवं दो हरी इलायची का पावडर डालकर अच्छी तरह मथ लें। ठंडाई के लिये इसमें थोड़ा-सा बर्फ तथा पाचक बनाने के लिये थोड़ा-सा संतकृपा चूर्ण भी मिलाया जा सकता है। इस पेय को लस्सी कहते हैं, जो ग्रीष्मकाल में शरीर में उत्पन्न होनेवाली अतिरिक्त उष्णता को नियंत्रित कर दिमाग में तरावट लाती है। बाजार में मिलनेवाली पावडर की लस्सी घातक सिद्ध हो सकती है लेकिन ताजे दही से घर

पर बनाई गई लस्सी पौष्टिक व स्वास्थ्यवर्द्धक होती है। लस्सी पीने के कुछ देर बाद तक पानी न पियें।

२. ठंडे किये दूध तथा पानी की सम मात्रा में थोड़ी-सी मिश्री अथवा शहद मिलाकर शर्बत पीने से भी शरीर को गर्मी से राहत मिलती है। जो लोग गर्मी के मौसम में दिन में भी चाय पीते हैं, उन्हें भी यह प्रयोग हितकारी होगा।

३. गेहूँ, चना, चावल तथा जौ को समान मात्रा में अलग-अलग सेंककर उनका आटा तैयार करावें तथा चारों के आटे को आपस में मिलाकर किसी साफ बर्तन में भरकर रख दें। दोपहर में प्रतिदिन आवश्यकतानुसार मात्रा में लेकर पानी अथवा दूध मिलाकर आसानी से पिया जा सके, ऐसा घोल तैयार कर उसमें एक दो चम्मच शुद्ध घी तथा स्वाद अनुसार मिश्री डालकर पियें। आयुर्वेद में इस घोल को सक्त, सत्त्व, सत्तू आदि नामों से जाना जाता है।

इसके सेवन से थकावट दूर होती है, ताजगी तथा शक्ति प्राप्त होती है। सत्तू का सेवन भोजन के दो घंटा पूर्व अथवा दो घंटा पश्चात् ही करना चाहिये। इसे चबाकर खाना हितकारी नहीं जबकि एकदम तरल बनाकर पीना अत्यधिक गुणकारी बतलाया गया है। अधिक मात्रा में तथा रात्रि में इसका सेवन निषिद्ध है।

४. एक गिलास ठंडे पानी में एक नींबू का रस तथा थोड़ी-सी मिश्री डालकर शिकंजी बनाकर पीने से भी गर्मी से राहत मिलती है।

५. कच्चे आम के छिलके उतारकर उसे पानी में उबाल लें। तत्पश्चात् उसके गूदे को ठंडे पानी में मसल-मसल कर रस बना लें व नमक, जीरा, शक्कर आदि स्वादानुसार मिलाकर पियें। यह हमारे देश की शीतल पेयों की प्राचीन परम्परा का नुस्खा है जो सेहत के लिये गुणकारी होकर आज भी ग्रामों में अपनाया जाता है।

इसके अतिरिक्त आम, तरबूज, अंगूर आदि अन्य फलों का ताजा रस भी शीतल पेय के रूप में लिया जा सकता है।

शक्कर-नमक : कितने खतरनाक!

वैज्ञानिक तकनिक के विकास के पूर्व कहीं भी शक्कर खाद्य पदार्थों में प्रयुक्त नहीं की जाती थी। मीठे फलों अथवा शर्करायुक्त पदार्थों की शर्करा कम-से-कम रूपान्तरित कर उपयुक्त मात्रा में प्रयुक्त की जाती थी। इसी कारण पुराने लोग दीर्घजीवी तथा जीवन के अंतिम क्षणों तक कार्यसक्षम बने रहते थे।

आजकल लोगों में भ्रांति बैठ गई है कि सफेद चीनी खाना सभ्य लोगों की निशानी है तथा गुड़, शीरा आदि सस्ते शर्करायुक्त खाद्य पदार्थ गरीबों के लिये हैं। यही कारण है कि अधिकांशतः उच्च या मध्यम वर्ग के लोगों में ही मधुमेह रोग पाया जाता है।

शरीर में ऊर्जा के लिये कार्बोहाइड्रेट्स में शर्करा का योगदान प्रमुख है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि परिष्कृत शक्कर का ही उपयोग करें। शक्कर एक धीमा एवं श्वेत विष (Slow & White Poison) है। जो लोग गुड़ छोड़कर शक्कर खा रहे हैं उनके स्वास्थ्य में भी निरन्तर गिरावट आई है - यह एक सर्वेक्षण रिपोर्ट है।

परिष्कृतीकरण के कारण शक्कर में किसी प्रकार के खनिज, लवण, विटामिन्स या एंजाइम्स शेष नहीं रह जाते, जिससे उसके निरन्तर प्रयोग से अनेक प्रकार की बीमारियाँ एवं विकृतियाँ पनपने लगती हैं।

दन्तक्षय में भी शक्कर दोषी है अतः बच्चों को पीपरमेंट-गोली, चॉकलेट आदि शक्करयुक्त पदार्थों से दूर रखने की सलाह दी जाती है। अमेरिका में ९८% बच्चों को दाँतों का रोग है जिसमें शक्कर तथा इससे बने पदार्थ जिम्मेदार माने जाते हैं।

अधिक शक्कर अथवा मीठा खाने से शरीर में कैल्शियम तथा फास्फोरस का सन्तुलन बिगड़ता है जो सामान्यतया ५ और २ के अनुपात में होता है। शक्कर पचाने के लिये शरीर में कैल्शियम की आवश्यकता होती है तथा इसकी कमी से आर्थराइटिस, कैंसर, वायरस संक्रमण आदि रोगों की संभावना बढ़ जाती है। अधिक मीठा खाने से शरीर के पाचनतंत्र में विटामिन बी काम्प्लेक्स की कमी होने लगती है जो अपच, अजीर्ण, चर्मरोग, हृदयरोग, कोलाइटिस, स्नायुतन्त्र संबंधी बीमारियों की वृद्धि में सहायक होती है।

शक्कर के अधिक सेवन से लीवर में ग्लाइकोजिन की मात्रा घटती है जिससे थकान, उद्विग्नता, घबराहट, सिरदर्द, दमा, डाइबिटीज़ आदि विविध व्याधियाँ घेरकर असमय ही काल के गाल में ले जाती हैं।

लन्दन मेडिकल कॉलेज के प्रसिद्ध हृदयरोग विशेषज्ञ डॉ. लुईकिन अधिकांश हृदयरोग के लिये शक्कर को उत्तरदायी मानते हैं। वे शरीर की ऊर्जा प्राप्ति के लिये गुड़, खजूर, मुनक्का, अंगूर, शहद, आम, केला, मौसम्बी, खरबूजा, पपीता, गन्ना, शकरकंद आदि लेने का सुझाव देते हैं।

इसी प्रकार नमक (सोडियम क्लोराइड) का प्रचलन भोजन में दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। चटपटे और मसालेदार खाद्य पदार्थों का सेवन नित्य-नियमित रूप से बढ़ता जा रहा है। शक्कर की तरह नमक भी हमारे शरीर के लिये अत्यधिक हानिकारक है। यह शरीर के लिये अनिवार्य है लेकिन स्वास्थ्य-दृष्टि से आवश्यक लवण की मात्रा तो हमें प्राकृतिक रूप से खाद्य पदार्थों द्वारा ही मिल जाती है। हमारे द्वारा उपयोग में लाई जानेवाली हरी सब्जियों, अंकुरित बीजों आदि से हमारे शरीर में लवण की पूर्ति स्वतः ही हो जाती है।

कुछ वर्षों पूर्व ही एक ख्याति प्राप्त समाचार पत्र ने अपने आलेख में प्रकाशित कर इस कथन की पुष्टि की थी कि नमक शरीर के लिये जहर से भी अधिक खतरनाक होता है। चिकित्सा विज्ञान के शोधकर्त्ताओं ने भी इस तथ्य की पुष्टि की है कि रक्तचाप के रोगों का प्रमुख कारण ही नमक है, इसलिये हाईब्लडप्रेशर वाले रोगियों को भोजन में नमक पर प्रतिबन्ध लगाया जाता है। नमक छोड़नेवाले इस रोग से मुक्त हो जाते हैं और जो नहीं छोड़ते वे इससे त्रस्त रहते हैं।

एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि सुदूर वन्य एवं पर्वतीय क्षेत्रों में रहनेवाले अनेक आदिवासियों के आहार क्रम में नमक का कोई स्थान नहीं है। आधुनिक सुविधाओं से वंचित् वे लोग स्वास्थ्य दृष्टि से आज भी हमसे अधिक हृष्ट-पुष्ट एवं स्वस्थ हैं। शक्कर व नमक की पूर्ति वे खाद्य पदार्थों से ही कर लेते हैं।

नमक और शक्कर के अधिक सेवन से शरीर की रोगप्रतिकारक क्षमता का ह्रास होता है तथा उसे अनेक रोगों से जूझना पड़ता है।

अतः जिन्हें दीर्घायु होना है, सदैव स्वस्थ व प्रसन्न बने रहना है, साधनामय जीवन बिताना है, ऐसे लोग शक्कर एवं नमक को पूर्णरूपेण त्याग देवें अथवा सप्ताह में एक या दो बार नमक-शक्कररहित आहार लेते हुए, दैनिक जीवन में इनका अत्यल्प सेवन करें।

साधक परिवारों में खाद्य पदार्थों में नमक-शक्कर का अत्यल्प सेवन करना चाहिये। इससे आरोग्यता, प्रसन्नता बनी रहेगी तथा ईश्वर भक्ति में अधिक मदद मिलेगी।

❀

स्वास्थ्य-रक्षक सूचनाएँ

विषमासनोपविष्टेन पीतं तोयमथापि वा।
श्रमाध्वश्वास निष्क्रान्ते अतिव्यायामितेऽपि वा॥
पीतं चोदकमेवं च तस्माज्जातं जलोदरम्।

विषम आसन से अर्थात् खड़े-खड़े या लेटे हुए

पानी पीने से अथवा परिश्रम करके या मार्ग में चलकर आने के तुरन्त बाद, हाँफते-हाँफते अथवा अधिक व्यायाम करके तुरन्त ही पानी पीने से जलोदर (पेट में पानी भराने का रोग) होता है । कभी-कभी तो मृत्यु तक होती देखी है ।

जीर्णज्वरे कफे क्षीणे दुग्धं स्याद् अमृतोपमम् ।
तद्वत् तरुणे पीतं विषवत् हन्ति मानवम् ॥

पुराने बुखार में तथा कफ की क्षीणता में दूध अमृत के समान आवश्यक है लेकिन यदि चढ़ते बुखार में दूध पीने में आवे तो जहर की तरह इन्सान को मार भी सकता है । अतः नये बुखार में दूध नहीं पीना चाहिये ।

ज्वरे न किंचित् परमं किरातात्
तद्वन्न शुंठ्या ह्यतिसाररोगे ।
न तक्रतुल्यं ग्रहणीविकारे
ह्यर्शोविकारे विजयापरं न ॥

बुखार में करेले से बढ़कर, दस्त में सूंठ से बढ़कर, ग्रहणी के रोग में छाछ के समान तथा बवासीर रोग में हरड़े से बढ़कर कोई औषध नहीं ।

शक्तिवर्धक चाय

गेहूँ के आटे को छानने पर जो चोकर शेष बचता है, चिकित्सकों की राय में यह अत्यधिक लाभप्रद है । दस ग्राम चोकर लेकर एक प्याला पानी में उबालें तथा कपड़े से छान लें । तत्पश्चात् दूध-मिश्री मिलाकर प्रातः सायं चाय की भाँति सेवन करें ।

इस पेय के निरन्तर सेवन से शरीर दृढ़ और शक्तिशाली बनता है । इसमें यदि बादाम की पाँच गिरियाँ अच्छी तरह घिसकर मिला दी जावे तो इसके नियमित सेवन से शीघ्र बुढ़ापा नहीं आता, बुद्धि का विकास होता है तथा नजला, जुकाम व सिरदर्द का यह गुणकारी इलाज है ।

नेत्रज्योति-वृद्धि के उपाय

प्रतिदिन स्नान के पूर्व दोनों पैर के अंगूठों में सरसों का शुद्ध तेल मलने से वृद्धावस्था तक नेत्रों की ज्योति कमजोर नहीं होती । यह प्रयोग प्रतिदिन किया जाए तो चश्मा लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

सौ ग्राम गुलाबजल में दो ग्राम फिटकरी सेंककर डाल दें तथा प्रतिदिन रात्रि में सोते समय इस मिश्रण की दो-दो बूँदें आँखों में टपकाने से नेत्रों के अनेक रोग दूर होते हैं तथा मोतियाबिन्द जैसा रोग भी शनैः शनैः नष्ट हो जाता है । इस प्रयोग को नियमित रूप से करने पर चश्मों के नम्बर कम होते-होते एक दिन चश्मा ही उतर जाता है ।

जलनेति करके दो चुल्लू पानी नाक से पीने से गरूड़दृष्टि प्राप्त होती है । जलनेति किसी भी जानकार अथवा आश्रम के साधक से सीखी जा सकती है ।

(पृष्ठ २७ का शेष...)

के मेरी माताजी की हड्डियाँ बाहर की थोड़ी-सी चिकित्सा से ही जुड़ गई । ढाई महीने के बाद एक्स-रे निकलवाने पर डॉक्टरों को भी स्वीकार करना पड़ा कि ऑपरेशन से भी शायद इतनी अच्छी फिटिंग नहीं हो सकती थी ।

हमारे साधक-वर्ग में किसीसे लोग पू. बापू के चमत्कारों के संबंध में पूछते हैं तो वे साधक मेरा उदाहरण देते हुए कहते हैं कि 'डॉ. वघासीया के जीवन-परिवर्तन से अधिक अच्छा चमत्कार और कौन-सा हो सकता है ?'

सचमुच गुरु हैं दीनदयाल ।
सहज ही कर देते हैं निहाल ॥

- डॉ. बी. टी. वघासीया
गढ़ेची वडला, आर.टी.ओ. के सामने, भावनगर ।

❀

माननीय श्री पटेलजी,

सविनय प्रणाम ।

'ऋषि-प्रसाद' (जनवरी-फरवरी १९९५) प्राप्त हुआ । मुखपृष्ठ पर पूज्य बापू का चित्र बहुत भा गया । कैसी मस्ती में तल्लीन हैं वे ! फिर पू. बापू द्वारा ही सत्संग में कहा हुआ शेर याद आया :

मस्तानों की मस्ती इबादत से कम नहीं ।
फकीरों की हस्ती खुदा से कम नहीं ।।

संत और फकीर क्या भगवान से कम हैं ?

पूज्य संत श्री आसारामजी बापू ने मुझे बहुत प्रभावित किया । अब मेरे लिए वे गुरुस्थान पर सुशोभित हैं । बाह्यचक्षु से पूज्य बापू को मैंने देखा तो नहीं है परन्तु अंतर्चक्षु से मैं उनसे मिल चुका हूँ । पू. बापू सचमुच इस काल के महान् संत हैं जिन्होंने अपना जीवन दूसरों के कल्याण के लिए समर्पित कर दिया है । ऐसे महान् संत की तेजस्विता से हम भी तेजस्वी होने जा रहे हैं ।

१९९३ में प्रकाशा में पू. बापू का सत्संग हुआ । उस सत्संग की ऑडियो कैसेट द्वारा मैंने पूज्य बापू की अमृतवाणी का पहली बार श्रवण किया और तबसे पू. बापू हमारे हो गये, फिर तो बापू... बापू... और सिर्फ बापू ! संसारी मनुष्य का समस्त जीवन परिवर्तित करने की अद्भुत शक्ति पू. बापू की अमृतवाणी में है । 'मधुर मधुर नाम... हरि हरि ॐ...' इस कीर्तन से न जाने कितने-कितने लोगों को परमात्मा के वास्तविक आनंद में, ब्रह्मानंद में तल्लीन कर दिया ! न जाने कितनों का अहंकार जलकर भस्म हो गया ! संसार के प्रति आसक्ति, निराशा, छः विकार, इनसे मुक्त हो गया साधक ! जादू कर दिया संकीर्तन ने । बापू ! आप धन्य हैं ! आपकी वाणी धन्य है !!

आजकल संसार-सागर में डूबनेवालों को जिसने हाथ देकर बचाया है - वह हाथ किसका है ? यह प्रश्न अगर कोई मुझसे पूछे तो मैं फौरन बता दूँ : वह हाथ हमारे पूज्य बापू का है । उनकी सत्संगरूपी नौका में बैठकर मनुष्य इस संसार-सागर से अवश्य पार हो जायेगा । ज्ञान और भक्ति का सुरेख संगम जिसमें होता है वह पू. बापू का सत्संग है । स्त्री-पुरुष, बालक, युवा एवं वृद्ध सभी लोग जहाँ तल्लीन होकर झूमते हैं वह बापू का सत्संग है । बापू ! आप महान हैं !

बापू जैसे संत हमारे देश में हैं यह हमारे देश का सौभाग्य है और जिस देश में ऐसे संत होते हैं उस देश को तो सारे जगत् पर राज करने का अद्भुत सामर्थ्य दे सके ऐसी महान् शक्ति संतों में होती है । 'ऋषि प्रसाद' पूज्य बापू की अमृतवाणी को लोगों तक पहुँचाने का महान् कार्य कर रहा है ।

- संजयकुमार कृष्णराव भावसार
पत्रकार : दैनिक 'सौरचक्र', मालेगाँव, नासिक (महा.).

❀ मनुष्य जब गुरुभक्तियोग का आश्रय लेता है तभी उसका सच्चा जीवन शुरू होता है । जो व्यक्ति गुरुभक्तियोग का अभ्यास करता है उसे इस लोक में एवं परलोक में चिरन्तन सुख प्राप्त होता है ।

❀ जो जो सिद्धियाँ संन्यास, त्याग, अन्य योग, दान एवं शुभ कार्य आदि से प्राप्त की जा सकती हैं वे सब सिद्धियाँ गुरुभक्तियोग के अभ्यास से शीघ्र प्राप्त हो सकती हैं ।

❀ गुरुभक्तियोग एक शुद्ध विज्ञान है, जो निम्न प्रकृति को वश में लाकर परम सुख प्राप्त करने की पद्धति हमें सिखाता है ।

- स्वामी शिवानंदजी

ने ले लिया। फिर तो दिनांक : २६-१०-९२ के दिन हिम्मतनगर आश्रम में शरद पूनम के शिविर में मैंने सपत्नीक पूज्यश्री से मंत्रदीक्षा प्राप्त करके नवजीवन प्राप्त किया। चंचल, तूफानी, विकारी, ईर्ष्याखोर, द्वेषयुक्त, झगड़ाखोर और अनेक प्रकार के छल-कपट में डूबा हुआ रहनेवाला मैं पूज्यश्री की कैसेटों से ही बदल गया और मंत्रदीक्षा के पश्चात् तो मानो पूज्यश्री ने मेरे हृदयमंदिर पर कब्जा ही जमा लिया।

१९८७-८८ में वल्लभीपुर एवं उमराला में मैं मेडिकल ऑफिसर था उस दौरान् मेरे विरोधियों ने एक वाघरी को चढ़ाकर मेरे निवास-स्थान पर उसकी चिकित्सा करने के बदले में १० रूपये की रिश्वत लेने के दाँव-पेंच में फँसाया और 'भावनगर लाँच-रिश्वत विरोधी विभाग' के द्वारा मुझ पर मुकदमा दायर करवाया। भावनगर डिस्ट्रिक्ट एंड सेशन्स जज के न्यायालय में मेरे विरुद्ध चार्जशीट हुई। इस मुकदमे में आर्थिक दण्ड एवं छः महीने से सात साल तक की सजा भुगतनी पड़ती है। मेरे इस केस को लड़ने के लिए भावनगर का एक भी वकील तैयार न हुआ। वे लोग कहते कि खून करके आओ तो जीता दें किन्तु यह केस नहीं ले सकते।

मैंने पूज्य श्री गुरुदेव को इस केस की जानकारी देकर प्रार्थना की। तब पूज्यश्री ने मुझसे कहा :

"चिंता मत करना। कुछ नहीं होगा। केस निपट जायेगा। जितनी देर होगी उतना अच्छा होगा।"

... और वास्तव में ऐसा ही हुआ।

'मुझे न्यायालय में पूज्यश्री का विश्वरूपदर्शन हुआ...'

ई.स. १९८० में बड़ौदा एम. एस. युनिवर्सिटी से प्रथम श्रेणी में एम.बी.बी.एस. होकर अभी मैं भावनगर में 'संत श्री आसारामजी हॉस्पीटल' चला रहा हूँ। बड़ौदा में निवास के दौरान मैं रजनीश ध्यानकेन्द्र में जाता था। बारह वर्षों तक रजनीश की पुस्तकें पढ़ीं, ऑडियो-विडियो कैसेट देखे और अंत में पूना स्थित 'ओशो इन्टरनेशनल कोम्युन' में भी हो आया। किन्तु मुझे मन की शांति न मिली, कोई आध्यात्मिक अनुभूति न हुई। इसके विपरीत इससे मेरा जीवन स्वच्छंद, चंचल, मनमुखी और विकारी बनता गया।

> "मुकदमा शुरू होते ही मुझे वादी में, पंचों में, पुलिस इन्स्पेक्टर में, वकीलों में और न्यायाधीश में तथा उपस्थित श्रोताजनों में सर्वत्र पूज्यश्री बापू के दर्शन होने लगे। पूज्यश्री ही जगन्नियंता हैं एवं इस मुकदमे के नियंता भी वे ही हैं।"

एक बार मुझे पू. आसारामजी बापू की विडियो कैसेट देखने का लाभ मिला और वर्षों से जिसकी खोज थी वही चीज मुझे मिल गई। मेरे जीवन में चलचित्रों की कैसेटों का स्थान पूज्यश्री की कैसेटों

मेरे केस की दिनांक निश्चित हुई ८, ९, १० मार्च, १९९५। जिस न्यायालय में मेरा केस चलनेवाला था उस जज का ट्रांसफर, ट्रांसफर की समय-सीमा से पूर्व ही, मेरे केस के अगले दिन ही हो गया और पालनपुर के जज का ट्रांसफर भी उनकी समय-सीमा से पूर्व ही हो गया और वे भावनगर न्यायालय में हाजिर हुए। मुकदमा लगातार तीन दिन तक चला।

न्यायालय में जाने से पूर्व मैं गुरुदेव का पूजन करके एवं पाँच बार नारायण मंत्र का जप करके निकला। मैं आश्चर्य के साथ अनुभव कर रहा था कि मुझमें किसी नयी शक्ति का संचार हो रहा था। मेरा भय बिल्कुल चला गया था। पू. गुरुदेव निरंतर मेरे साथ रहकर प्रेरणा और निर्भयता का स्रोत बहा रहे थे।

न्यायालय में मुकदमे की शुरूआत हुई।

अलीगढ़ बम-काण्ड के आरोपी महर्षि अरविन्द घोष को न्यायालय के कक्ष में यत्र-तत्र-सर्वत्र श्रीकृष्ण के दर्शन हुए थे उसी प्रकार मुझे भी मुकदमा शुरू होते ही वादी में, पंचों में, पुलिस इन्स्पेक्टर में, वकीलों में और न्यायाधीश में तथा उपस्थित श्रोताजनों में सर्वत्र पूज्य श्री बापू के दर्शन होने लगे। पूज्यश्री ही जगन्नियंता हैं एवं इस मुकदमे के नियंता भी वे ही हैं - ऐसी भावना मुझमें दृढ़ हुई। मैं साक्षी भाव से मुकदमे की सुनवायी सुनता रहा। उसी दौरान अचानक परिस्थिति बदल गई। वादी, सरकारी वकील, पंच, पुलिस इन्स्पेक्टर इन सभी ने एक-दूसरे की अनुपस्थिति में विरोधाभासी बयान दिये। वे बयान मेरे पक्ष में ही हों ऐसे थे। अंत में न्यायाधीश ने निर्णय दिया कि यह मुकदमा सरासर बोगस है और ऐसा झूठा मुकदमा दायर करने के बदले में पुलिस इन्स्पेक्टर को डाँटा-फटकारा। मुझे निर्दोष घोषित किया गया।

बाद में प्रत्यक्ष रूप से मिलने पर वादी तथा पंचों ने बताया कि मैं निर्दोष छूट जाऊँ उसके लिये उन लोगों ने अपने-अपने देवी-देवताओं से मनौतियाँ मानी थी।

धन्य हैं मेरे गुरुदेव की असीम कृपा ! उन्होंने मुझे अनुभव करवा दिया कि वे ही सबमें सर्वत्र आत्मभाव से, अद्वितीय रूप से बस रहे हैं।

सभी शिष्य रक्षा पाते हैं
सूक्ष्म शरीर गुरु आते हैं...

हम सभी ने पू. बापू को याद करते हुए बड़दादा की १०८ बार प्रदक्षिणा करने की मनौती मानी और मात्र तीन दिन में ही बिना ऑपरेशन के चमत्कारिक रूप से गाँठ पिघल गई।

मेरे दस वर्षीय पुत्र चिराग को जाँघ के ऊपरी हिस्से में एक बड़ी गाँठ निकली।कुशल सर्जनों ने अपनी राय दी कि ऑपरेशन करना पड़ेगा। पाँच सौ ग्राम जितनी पीब निकलेगी। बेटा तो डर गया। हम सभी ने पू. बापू को याद करते हुए बड़दादा की १०८ बार प्रदक्षिणा करने की मनौती मानी और चमत्कारिक रूप से तीन दिन में ही बिना ऑपरेशन के गाँठ पिघल गई।

हड्डियों के सर्जनों के आश्चर्य के बीच ही बिना ऑपरेशन के मेरी माताजी की हड्डियाँ बाहर की थोड़ी-सी चिकित्सा से ही जुड़ गई।

मेरी माताजी को सीढ़ी पर से गिर जाने के कारण जाँघ के नीचे के भाग में खड़े और आड़े फ्रेक्चर हुए। हड्डी के तीन टुकड़े हो गये। इन्टर-कोन्डाइलर नामक यह फ्रेक्चर सबसे खराब फ्रेक्चर होता है। ऑपरेशन के सिवा कोई चारा न था। मैंने और मेरी पत्नी ने पूज्य बापू का स्मरण करके बड़दादा की १०८ प्रदक्षिणा करने की मनौती मानी और हड्डियों के सर्जनों के आश्चर्य के बीच ही बिना ऑपरेशन

(शेष पृष्ठ २४ पर...)

संस्था समाचार

उज्जैन : दिनांक : २३ से २७ फरवरी '९५ तक दशहरा मैदान, उज्जैन में श्री योग वेदान्त सेवा समिति द्वारा आयोजित पूज्य गुरुदेव के गीता-भागवत सत्संग समारोह ने मालवा की जनता में एक बार पुनः सिंहस्थ कुम्भ की स्मृति ताजा कर दी । इस विशाल सत्संग समारोह में मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री सुन्दरलाल पटवा सपरिवार, मध्य प्रदेश शासन के जनशक्ति नियोजन मंत्री नरेन्द्र नाहटा, पूर्व मंत्री बाबूलाल जैन आदि अनेक गणमान्य प्रतिष्ठितों ने भाग लिया । शिवरात्रि के दिन हुई पूर्णाहुति के अवसर पर समाचार पत्रों के अनुसार दो लाख से अधिक श्रद्धालुओं ने पूज्यश्री की पीयूषवर्षी वाणी का लाभ लिया ।

औरंगाबाद : दिनांक : १ मार्च को पूज्य बापू विशेष विमान से औरंगाबाद पहुँचे । यहाँ भाग्यनगर के राधाकृष्ण मंदिर परिसर में हजारों-हजारों भक्तों ने आपश्री की पीयूषवर्षी वाणी का रसपान किया ।

पीथमपुर : एशियाप्रसिद्ध उद्योग नगरी पीथमपुर में पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में दिनांक : ४ एवं ५ मार्च को गीता-भागवत सत्संग समारोह का विशाल आयोजन हुआ । क्षेत्र की जनता के साथ मध्य प्रदेश विधान सभा के प्रतिपक्ष नेता विक्रम वर्मा ने भी सत्संग अमृत का पान किया । विश्ववंद्य संत श्री आसारामजी महाराज ने कहा : "जिसने मन को जीत लिया मानो उसने सारे संसार को जीत लिया । यदि मन एकाग्र हो तो शत्रु क्या बिगाड़ सकता है ? मन एकाग्र हो तो उसके आगे राज्य-सुख क्या होता है ? स्वर्ग-सुख क्या होता है ? मन की एकाग्रता जितने अंशों में होती है उतने ही अंश में तुम इहलोक-परलोक में सफल हो सकते हो ।"

महायोगीराज पू. बापू आगे कहते हैं : "आसक्ति बड़ी दुःखदायी है । हम सुख में आसक्त होते हैं, इससे हृदय अपवित्र एवं भयभीत हो जाता है । सुख की परिस्थिति या सुख के साधन सदा नहीं रहते । आखिर छूट ही जाते हैं चाहे कितने भी थामकर रखो । अतः सुख में आसक्ति मत रखो ।"

अपनी ज्ञानसंपन्न पीयूषवर्षी वाणी से श्रोताओं को तृप्त करते हुए पूज्यश्री कहते हैं : "जीवन में आग्रह नहीं होना चाहिए । नवग्रह (मंगल, शनि आदि) इतने खतरनाक नहीं, जितना आग्रह खतरनाक है । मंगल या शनि के ग्रह में मनुष्य परिवर्तन कर लेता है, शांति करवा लेता है किन्तु आग्रह में परिवर्तन करने की तस्दी नहीं लेता ।

मनुष्य यदि धनवान् होने का आग्रह करेगा तो तनावग्रस्त रहेगा, सत्ता का आग्रह करेगा तो सत्ता से हटाया जायेगा, यश का आग्रह करेगा तो यश से हटाया जायेगा, मान का आग्रह करेगा तो मान से हटाया जायेगा - अपमान सहना पड़ेगा । अगर उन चीजों का आग्रह नहीं है तो वे चीजें अपने आप उसके पास आयेंगी और वह उत्तम भोक्ता हो जायेगा । लेकिन आग्रह रखेगा तो उसमें फँस मरेगा । इसलिए आग्रह करना ही हो तो इस बात का करना कि कोई आग्रह ही न रहे ।"

इसके पूर्व दिनांक : २ से ३ मार्च तक पूज्य बापू के कृपापात्र साधक श्री सुरेशानन्दजी के सत्संग का भी पीथमपुरवासियों ने लाभ लिया । ५ मार्च को पूज्य बापू के करकमलों से ब्रह्मलीन सद्गुरु संत परम पूज्य स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज की प्रतिमा का प्राणप्रतिष्ठा समारोह भी सम्पन्न हुआ ।

सिरोही : राजस्थान के इस जिला मुख्यालय पर दिनांक : ८ मार्च को सर के. एम. विद्यालय के खेल परिसर में पूज्य बापू का सान्निध्य पाकर हजारों-हजारों हृदय एक साथ हरिनाम संकीर्तन एवं सत्संग-सरिता की लहरों में झूमकर आनंदित हो उठे ।

सुमेरपुर : दिनांक : ९ से १२ मार्च तक संत श्री आसारामजी आश्रम में वेदान्त शक्तिपात साधना

शिविर संपन्न हुआ जिसमें संपूर्ण राजस्थान एवं भारत के अन्य प्रान्तों से आये हजारों ज्ञान-पिपासुओं ने वेदान्त के गूढ़ रहस्यों एवं अपने भीतर छुपी हुई अनन्त शक्ति के जागरण के विविध उपायों का पूज्य बापू के पावन सान्निध्य में प्रयोग किया ।

सूरत : प्रतिवर्षानुंसार इस वर्ष भी दिनांक : १५ से १७ मार्च १९९५ तक जहाँगीरपुरा, सूरत स्थित आश्रम में होली के शिविर का आयोजन हुआ जिसमें देश-विदेश से आये लाखों साधकों ने श्रद्धा, प्रेम व भक्ति के मिश्रित रंगों से अपने सद्‌गुरु के साथ होली मनाई । विभिन्न रंगों के शरीर पर पड़नेवाले प्रभावों का भी इस शिविर में पूज्य गुरुदेव ने साधकों के लिये विशेष वर्णन करते हुए कहा :

"आपके मन पर रंगों का प्रभाव पड़ता है और आपके स्वभाव के अनुसार ही आपको कुछ विशेष रंग अच्छे लगते हैं । आपके वस्त्रों के रंग की पसन्द पर से आपके स्वभाव का अनुमान लगाया जा सकता है । भगवा रंग संयम, तप, साधुता आदि का द्योतक है । तिलक, गुलाल आदि का लाल रंग मांगल्यसूचक है एवं शौर्यप्रियता, विजय के संस्कार की खबरें देता है । पीला रंग ज्ञान, विद्या, सुख-शांतिमय स्वभाव, विद्वत्ता आदि का प्रतीक है । हरे रंग से हृदय की शीतलता, उद्योगिता, चुस्ती, आत्मविश्वास, सुन्दरता आदि सूचित होते हैं । नीला रंग औदार्य, व्यापकता, पौरुष, धैर्य, सत्य और धर्मरक्षण की वृत्ति का द्योतक है । श्वेत रंग में पवित्रता, शुद्धता, शांतिप्रियता, विद्याप्रियता निहित है । काला रंग शोक, दुःख, निराशा, पतन, पलायनवादिता और स्वार्थप्रियता दर्शाता है । मटमैला रंग गंभीरता, विनम्रता, सौम्यता, लज्जा और कर्मठता का प्रतीक माना जाता है ।

इस प्रकार रंग मानव स्वभाव का चित्रण करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । वस्त्रों के रंग तो फीके पड़ जाते हैं । आत्मरंग ऐसा रंग है जो कभी फीका नहीं पड़ता, बदरंग नहीं होता । हमारी इन्द्रियों पर, मन पर संसार का रंग पड़ता भी है और वह बदलता भी है लेकिन भक्ति और ज्ञान का रंग यदि एक बार भी लग जाय तो मृत्यु के बाप की भी ताकत नहीं है कि वह उसे छुड़ा सके ।"

अहमदाबाद : ३१ मार्च से २ अप्रैल तक मोटेरा स्थित आश्रम में चेटीचंड शिविर का आयोजन हुआ जिसमें नवनिर्वाचित गुजरात सरकार के मुख्यमंत्री श्री केशुभाई पटेल ने पूज्यश्री के चरणों में बैठकर सत्संग-प्रवचन का लाभ लिया । श्री पटेल ने पूज्य बापू से प्रार्थना की कि हमें ऐसी शक्ति, ऐसा साहस प्रदान करें कि हम समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, दुराचार, एवं अन्यान्य दुर्गुणों को समूल नष्ट कर जनता की सेवा में स्वच्छ प्रशासन उपलब्ध करवा सकें ।

दिनांक : ७ से ९ अप्रैल तक अहमदाबाद के शास्त्री स्टेडियम (बापूनगर) में पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में रात्रिकालीन सत्संग समारोह का आयोजन हुआ जिसमें लाखों लोगों ने पूज्यश्री की अमृतवाणी का लाभ लिया ।

हिम्मतनगर : दिनांक : १४ से १६ अप्रैल तक हिम्मतनगर आश्रम में पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ जिसमें भारतभर से हजारों जिज्ञासु साधकों एवं भक्तों के साथ पूर्णिमा व्रतधारियों ने भी पूज्यश्री के उपदेशामृतों का लाभ लिया । 'रामायण' सीरियल के रावण बने हुए एवं वर्तमान में सांसद अरविन्द त्रिवेदी तथा मोदी ग्रुप के चेयरमेन केदारनाथ मोदी ने भी इस शिविर में पूज्यश्री के दर्शनों का लाभ लिया ।

भोपाल : २० से २३ अप्रैल तक भोपाल आश्रम में वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ जिसमें २० अप्रैल को पूज्य गुरुदेव का ५४ वाँ जन्मदिवस महोत्सव मनाया गया । पूज्यश्री के इस ५४ वें जन्म-दिवस समारोह में लाखों साधकों के अलावा म.प्र. के उप मुख्यमंत्री सुभाष यादव, स्थानीय शासन मंत्री तनवंत कीर, भूतपूर्व मंत्री लक्ष्मीनारायण शर्मा, म.प्र. शासन के भूतपूर्व सचिव आई. एस. राव

और अन्य राजनेताओं तथा अधिकारियों ने भाग लिया। १३ सिलाई मशीनें, ५ टेबलफेन एवं ५ सायकलें गरीबों में वितरित की गई ।

देशभर में विभिन्न समितियों द्वारा भी इस अवसर पर ५४ लाख लोगों को भोजन, दक्षिणा एवं वस्त्र आदि वितरित किये गये । भारत भर में फैली योग वेदान्त सेवा समिति की ४५० से अधिक शाखाओं तथा लाखों साधक परिवारों में इस महोत्सव के उपलक्ष्य में कई विशेष आयोजन किये गये। श्रीगुरुगीता एवं श्री आसारामायण आदि का पाठ करके अनेक लोगों को प्रसाद दिया गया । स्थान-स्थान पर बालभोज कराया गया, सत्साहित्य वितरण किया गया, संकीर्तन यात्राएँ निकाली गई एवं नियमित सन्ध्योपासना के नियम लिये गये ।

दिनांक : २१-४-९५ के दिन डायरेक्टर जनरल ऑफ पोलीस (D.G.P.) अरुण गुरटू, 'दैनिक भास्कर' के प्रबंध संचालक रमेश अग्रवाल एवं भूतपूर्व मंत्री बाबुलाल गोड ने शिविर में आकर पूज्य गुरुदेव के पावन दर्शन एवं सत्संग-प्रवचन का लाभ लिया ।

विदिशा : यहाँ दिनांक : २५-४-९५ को एक दिवसीय सत्संग समारोह में हजारों लोगों ने पूज्यश्री की अमृतमयी वाणी का लाभ लिया ।

तेरे बगैर सद्गुरु...

बिगड़ा नसीब किसने सँवारा तेरे बगैर ।
हम दीनों का कौन सहारा तेरे बगैर ॥

बे-आसरों का आसरा इक तू ही सद्गुरुदेव ।
दीनों ने कब किसीको पुकारा तेरे बगैर ॥

दुनियाँ ने जखम दिल पै लगाये हैं बेशुमार ।
किसने किया है दर्द का चारा तेरे बगैर ॥

मिलता है तेरे दर से मुकद्दर से भी ज्यादा ।
कब गैर के दर पै हाथ पसारा तेरे बगैर ॥

मेरी तो दौड़ गुरुदेव बस आप तक ही है ।
और नहीं कोई साँई हमारा तेरे बगैर ॥

तुझको भुला दूँ सद्गुरुदेव गँवारा नहीं मुझे ।
होता नहीं है अपना गुजारा तेरे बगैर ॥

मेरी एक ही तमन्ना है ओ सद्गुरुदेव !
देखूँ न और कोई नजारा तेरे बगैर ॥

बिगड़ा नसीब किसने बनाया तेरे बगैर ।
हम बेकसों का कौन सहारा तेरे बगैर ॥